चन्दामामा
अक्तूबर १९६८

Chandamama Press
VADAPALANI
MADRAS 26
OFFERS YOU...
FINEST PRINTING.-
Equipped with
PHOTO GRAVURE
KLIMSCH CAMERA
VARIO KLISCHOGRAPH-
-BLOCK MAKING
and a
host of Others....

सबसे आगे
सबसे अव्वल....
यह है
लाल-शर
की देन
डाबर
(डा० एस० के० बर्मन) प्राइवेट लिमिटेड

चन्दामामा

अक्तूबर १९६८

करारी खबर...
SATHE
आपके मनपसंद
साठे
पिकनिक
बिस्कुट
अब खूबसूरत और
हवा से बचाव करने वाले
कारटन में मिलते हैं।
साठे बिस्कुट एण्ड चॉकलेट कं. लि., पूना-२

दि यूनियन बैंक ऑफ़ इण्डिया प्रस्तुत करता है :

जाली चैक का रहस्य

नौजवानों की पसन्द है

फ़िलिप्स

आप पसन्द करेंगे

फ़िलिप्स

टी. आई. साइकिल्स आफ इण्डिया,
अम्बत्तूर, मद्रास-५३.

"(मालिक: ट्यूब इन्वेस्टमेन्ट्स आफ इण्डिया लिमिटेड, मद्रास-१)"

जम्मू तथा काश्मीर के लिए हमारे भवन से सम्पर्क कीजिए:

चन्दामामा
संपादक : चक्रपाणी
हमारे अनुरोध पर कई लेखकों ने सुंदर कहानियाँ प्रकाशनार्थ भेजीं; हम उनमें से अच्छी रचनाएँ छाँटकर आगामी अंकों में प्रकाशित करने जा रहे हैं। हमारा उद्देश्य न केवल बच्चों को सुन्दर कहानियाँ पढ़ने को देना है, बल्कि अच्छे बाल साहित्य के लेखकों को भी तैयार करना है।
हम पाठकों से अनुरोध करते हैं कि चन्दामामा के बारे में अपने विचार संक्षेप में लिख भेजें जिस से इसको और उत्तम बनाया जा सके।
वर्ष : २० अक्तूबर १९६८ अंक : २

भारत का इतिहास

लार्ड वारेन हेस्टिंग्स १ जनवरी १८२३ को जब गवर्नर जनरल के पद को छोड़-इंग्लैंड चला गया, तब तक सतलज से ब्रह्मपुत्र तक, हिमालय से कन्याकुमारी तक का सारा भारत अंग्रेज़ों के अधीन हो गया था। लेकिन इस साम्राज्य में शाश्वत रूप से शासन करने के लिए ब्रिटीशवालों को पूर्वी और पश्चिम की सीमाओं पर दूसरों के जरिये होनेवाले उपद्रवों को दबाना जरूरी हो गया।

अंग्रेज़वालों का बर्मा के साथ १७ वीं शताब्दी से व्यापारिक संबंध था, मगर पूर्वी सीमा ठीक से निर्धारित न हो पायी थी। यह अंग्रेज़वालों के लिए परेशानी का कारण था। इसलिए बर्मावाले जब-तब उपद्रव मचाते रहे। बर्मा के साथ दुश्मनी न मोल लेने के ख्याल से ब्रिटीशवालों ने १७९५-१८११ के बीच छे बार दूत भेजे।

१८१९-२२ में बर्मावालों ने आसाम को जीत लिया; १८२३ सितंबर में चिटगांव के समीप में स्थित शाहपुरी नामक टापू पर घेरा डालकर वहाँ के ब्रिटीश सैनिकों को भगा दिया। इसके बाद बर्मावालों ने बंगाल में कंपनी के अधीन में स्थित प्रदेशों पर बराबर हमला करना शुरू किया।

ऐसी हालत में नये गवर्नर जनरल ने २४ फरवरी १८२४ में बर्मा के साथ लड़ाई की घोषणा की। ब्रिटीश फौज ने आसाम से बर्मा की फौज को भगा दिया, लेकिन चिटगांव की सीमा रामू नामक प्रदेश के पास बंदूला नामक बर्मा के प्रमुख सेनापति के दलों के द्वारा भारी अंग्रेज़ फौज भगा दी गयी।

परंतु इस बीच ब्रिटीशवालों ने समुद्री मार्ग से रंगून पर चढ़ाई करने की सोची।

४४. बर्मा की लड़ाइयाँ

इसके लिए ११,००० सैनिकों को इकट्ठा किया, उन में अधिक लोग मद्रास प्रांत के थे और उनका सेनापति जनरल कांपबेल था। ब्रिटिश नौकाओं का अधिपति कप्तान मर्याट नामक एक प्रसिद्ध अंग्रेज़ उपन्यास-कार था!

११ मई १८२४ को रंगून ब्रिटिश सेना के अधीन हो गया। बर्मावालों ने ब्रिटिश फ़ौज का सामना नहीं किया, बल्कि चालाकी से वे अपनी सारी संपत्ति लेकर पेगू के जंगलों में भाग गये। ब्रिटिश सेना को रसद तक न मिली। बरसात का मौसम होने की वजह से आबोहवा बड़ी ख़राब थी। ब्रिटिशवालों को कई तरह से तकलीफ़ें झेलनी पड़ीं।

१ दिसंबर तक बंदूला ६० हज़ार सैनिकों के साथ रंगून के समीप आ पहुँचा। परंतु उस महीने की १५ तारीख को ब्रिटिशवालों के हाथों में हारकर डोनाब्यू नामक प्रदेश के लिए वापस लौटा। वहाँ रहकर १८२५ अप्रैल तक लड़ते, संयोग से गोली खाकर मर गया। उसकी मौत से बर्मा को बड़ी भारी क्षति हुई।

ब्रिटिश सेनापति कांपबेल २५ अप्रैल को दक्षिणी बर्मा की राजधानी प्रोम नगर पर आक्रमण करके बरसात के ख़तम होने तक वहीं रहा। २४ फरवरी १८२६ को बर्मा और ब्रिटिशवालों के बीच समझौता हुआ। ब्रिटिशवालों को लड़ाई के नुकसान भरने बर्मावालों ने एक करोड़ रुपये दिये, और आसाम, काचार, मणिपुर के प्रांतों पर दखल न देने का वचन दिया। बर्मा में ब्रिटिश रेसिडेंट का प्रबंध किया। इस लड़ाई के द्वारा बर्मा के लगभग संपूर्ण समुद्री तट पर ब्रिटनवालों को काफ़ी अधिकार प्राप्त हुए।
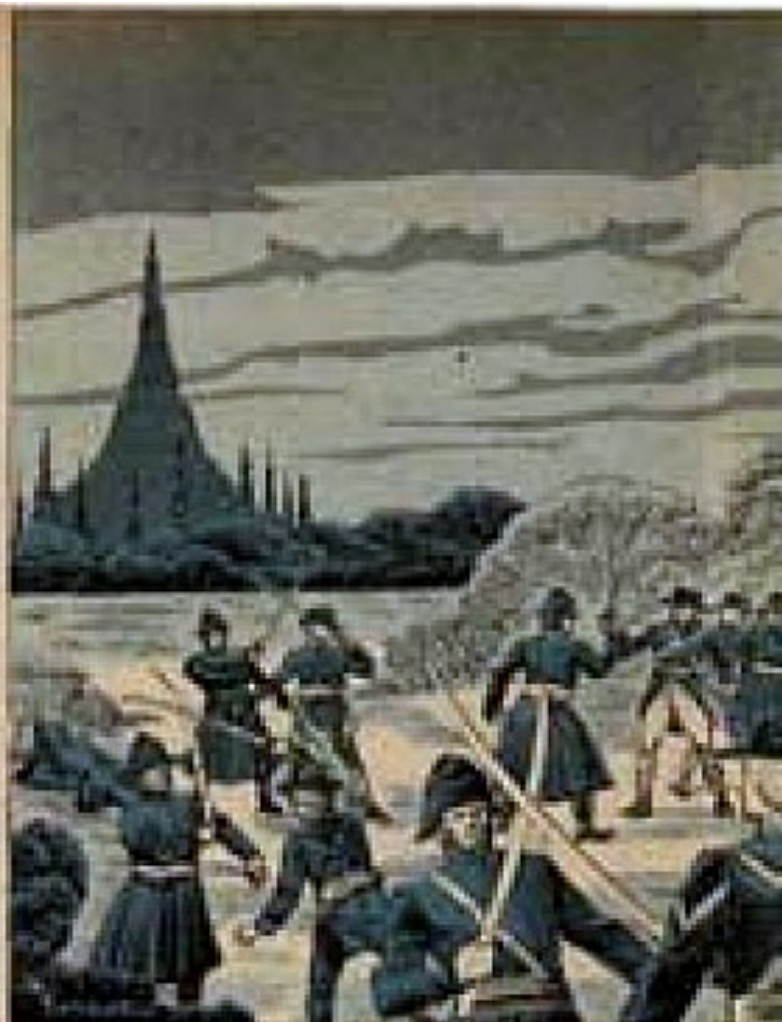
बर्मा के साथ हुई पहली लड़ाई के द्वारा या उसके बाद की संधि से भी ब्रिटिशवालों

की इजाजत मुल्की नहीं। मई १८३७ में पुराने बर्मा के राजा को हटाकर, उस के भाई को राजा घोषित किया गया। नये राजा ने साफ़ बताया कि मेरे भाई ने जो संधि की, उन शर्तों की ज़िम्मेदारी मैं नहीं ले सकता। उसने ब्रिटीश रेसिडेंटों का अपमान किया। १८४० में रेसिडेन्सी को बंद करना पड़ा। रंगून में रहनेवाले बर्मा के राजप्रतिनिधि (गवर्नर) ने ब्रिटन के व्यापारियों को कई तकलीफ़ें दीं। उन लोगों ने कलकत्ते की सरकार से प्रार्थना की।

गवर्नर जनरल डलहौसी ने बर्मा को एक जंगी जहाज़ भेज कर बर्मा के राजा को कैद कराना और मांग की कि ब्रिटीश के व्यापारियों के नुकसान की पूर्ति करे और रंगून के गवर्नर का तबादला किया जाय। बर्मा का राजा युद्ध करना नहीं चाहता था, पर ब्रिटीश जंगी जहाज़ का अधिपति लाम्बर्ट की जल्दबाज़ी के कारण बर्मावालों ने उस जंगी जहाज़ पर गोलियों की वर्षा की। १ अप्रैल १८५२ के भीतर ब्रिटीशवालों को बर्मावाले एक लाख गिन्नी नुकसान भरें, यह मांग ब्रिटीशवालों ने की, पर बर्मावालों ने इसका कोई जवाब न दिया।

ब्रिटीशवालों ने अपनी मांगों की पूर्ति की जो मियाद रखी थी, उसकी पूर्ति के होते ही ब्रिटीश सैनिक एवं नौकादल भी रंगून पहुँचे। जल्द ही मर्तबान का पतन हुआ। १४ अप्रैल को ब्रिटीश सैनिक विश्व विख्यात रंगून के पगोडा में घुस गये। एक मास बाद बसीन पर आक्रमण किया। अक्तूबर और नवंबर के महीनों में प्रोम नगर तथा पेगू भी बर्मावालों के हाथों से निकल गये। पेगू के ब्रिटीशवालों के अधीन होते ही ब्रिटन के भारतीय साम्राज्य की पूर्वी सीमा बंगाल की खाड़ी के पूर्वी तट को छू गयी।

कोयल का इलाज़

दादा जब घर पहुँचा, तब बच्चे तस्वीरों वाली किताब को घेरे कोलाहल कर रहे थे।

"यह कैसी किताब है, बेटे!" दादा ने पूछा।

"चिड़ियों की तस्वीरवाली किताब है, दादाजी! तस्वीरों के नीचे चिड़ियों के बारे में लिखा है।" बच्चों ने कहा।

"ओ, यह बात है!" यह कहते दादा आराम कुर्सी पर झुक पड़ा। बच्चे दादा को घेर कर तरह-तरह के सवाल पूछने लगे।

"दादाजी, क्या उल्लू दिन के वक्त घोंसले से बाहर नहीं निकलता?...कोयल कौए के घोंसले में अण्डे देकर बच्चे सेकवा लेती है?"

"दादा, दुपहर को, हमारे नीम के पेड़ पर कोयल कूकती थी।" मुन्ना ने कहा।

"अपने घोंसले में रहनेवाली कोयल की बच्ची जब तक नहीं कूकती, तब तक कौआ उसे अपनी ही बच्ची मानता है। जब कूकती है, तब भगा देती है, दादा!" बड़े लड़के ने कहा।

"इसके पीछे एक कहानी है, बेटे!" दादा ने कहा।

कहानी का नाम सुनते ही बच्चे दादा के और नजदीक आये और चिल्लाने लगे— "दादाजी, एक कहानी सुनाओ!" दादा ने सूंघनी लेकर कहानी शुरू की:

एक देश में एक बड़ा जंगल है। उसके एक हिस्से में चिड़ियों का राज्य है! एक दिन एक नटखट लड़का गेंद-गुलेल लेकर पेड़ों पर बैठी चिड़ियों को मारने पक्षियों के राज्य में गया।

जानते हो, उस वक्त क्या हुआ? उसने मिट्टी का जो ढेला फेंका, वह उल्लू की

त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी
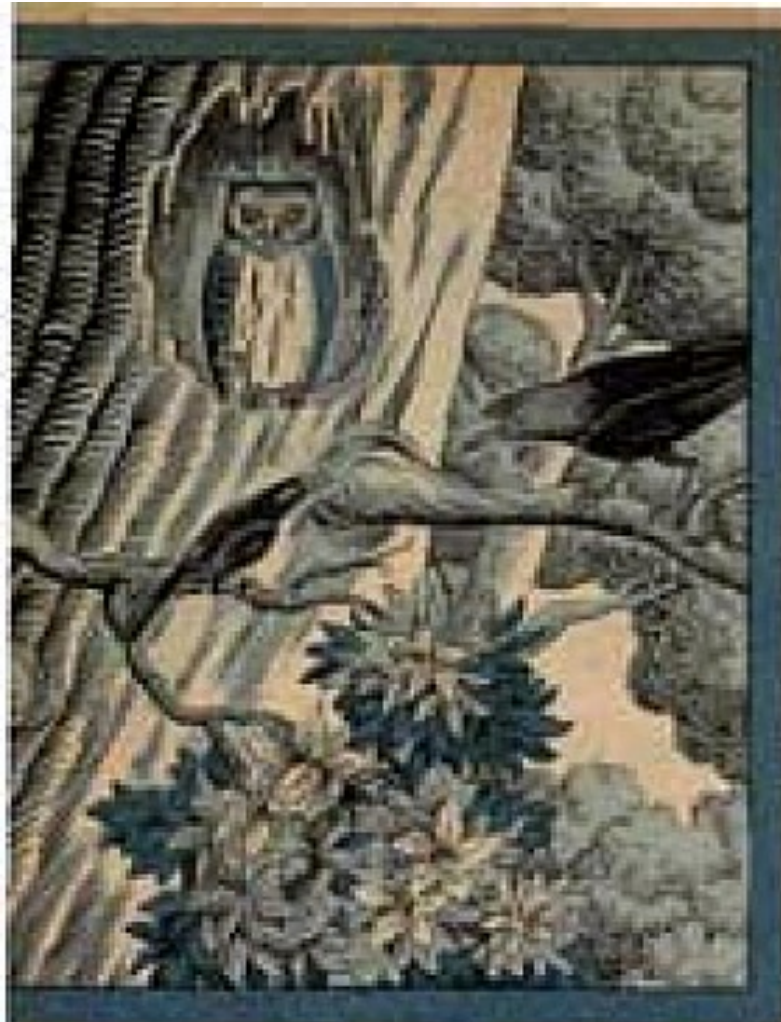
बगल में घुस गया। उल्लू को मालूम न था कि क्या हुआ है! बेचारे, उसकी बगल में जोर का दर्द होने लगा और वह इस पीड़ा से कराहने लगा।

उल्लू जिस पेड़ पर बैठा था, उसी पेड़ की एक दूसरी डाल पर कौआ बैठा था। उल्लू की कराहट सुनकर कौए ने पूछा—"क्या बात है बहनोई साहब, कराहते क्यों हो?"

"अरे, क्या बताऊँ, अचानक बगल में दर्द होने लगा है!" उल्लू दर्द से परेशान होते बोला।

"अरे क्या कहा, बगल में दर्द होता है और तुम चुप बैठे हो! जल्दी इलाज कराओ! बहनोई कोयल अच्छा वैद्य है। बड़ी बड़ी बीमारियों का पल भर में इलाज कर बैठता है।" कौए ने सलाह दी।

"तब तो उस वैद्य को तुरंत बुला लाओ! तुम्हारा शुभ होगा! बाप रे! मर गया!" उल्लू बोला।

कौआ जल्दी कोयल को बुला लाया।

कोयल ने उल्लू की सर से पैर तक जाँच की। उसने समझ लिया कि उल्लू के दर्द का कारण मिट्टी का ढेला है।

"मेरी जाँच हो गयी! इसका दाम दोगे तो मैं इलाज बता सकता हूँ!" कोयल ने कहा। उल्लू अव्वल दर्जे का कंजूस है। इसलिए कोयल ने इलाज का खर्च पहले ही लेना चाहा।

"एक ओर मैं दर्द से मरा जा रहा हूँ तो तुम अपने इलाज के खर्च की चिंता करते हो। जल्दी इलाज शुरू करो! उफ़, सहा नहीं जाता।" उल्लू कराहने लगा। कोयल अपनी फ़ीस की चिंता कर रहा था। यह भाँपकर कौआ बोला—"डाक्टर, तुम इलाज कर दो, मैं तुम्हारी फ़ीस की जिम्मेदारी लेता हूँ।"

"अच्छी बात है, तब तो सुनो! दोनों कंधों के बराबर के पानी में कुछ देर बैठे

रहे तो दर्द अपने आप जाता रहेगा।" कोयल ने उपाय बताया।

तुरंत कौआ उड़कर चला गया, उल्लू के बैठने के लिए एक छोटा-सा पानी का गड्ढा ढूंढ निकाला। उल्लू जाकर उस में बैठ गया। थोड़ी ही देर में मिट्टी का ढेला भीग कर गल गया और उल्लू की बगल में से खिसक कर पानी में आ गिरा। उल्लू का दर्द जाता रहा। वह आराम से अपने घोंसले में लौट आया।

दूसरे दिन कोयल उल्लू को देखने आया। देखा, उसकी बीमारी दूर हो गयी थी। इसलिए पूछा—"अब मेरी फीस दे दो!"

"अरे भाई, तुमने पानी में बैठने के लिए बताया, क्या यही इलाज है? और उसके लिए फीस देनी है? कोई सुने तो हँसे!" उल्लू बोला।

"यह क्या कहते हो, तुम बीमारी के दर्द से जब परेशान थे, तब मुझे बुला भेजा। मैंने बीमारी का पता लगा कर इलाज बताया। मेरे इलाज का फल तुमको मिला। इसलिए मुझे तुम्हें फीस देनी ही होगी।" कोयल ने कहा।

"मैं तुमको कुछ नहीं दूंगा। पानी में बैठने की सलाह देना इलाज नहीं कहलाता!" उल्लू बोला।

"यह बात मैं कौए से फ़ैसला करूँगा। उसने फ़ीस की ज़िम्मेदारी ली।" यह कह कर कोयल कौए को देखने चला।

"देने को मेरे पास धरा ही क्या है! इस चिड़ियों के राज्य में मुझ से बढ़कर दरिद्र कोई नहीं है।" कौए ने जवाब दिया।

चिड़ियों के राज्य का न्यायाधिपति रामबंधु है। इसलिए कोयल ने रामबंधु के पास जाकर अपनी फ़ीस वसूल करने की शिकायत की।

मुक़द्दमे की सुनवाई हुई।

उल्लू ने क़सम खाकर कहा—"मैं ने अपने मुँह से कभी नहीं बताया कि कोयल के इलाज की फ़ीस दूँगा।"

कौए ने यह मान लिया कि उसने उल्लू को कराहते देख उसकी मदद करने के ख्याल से ज़िम्मेदारी ली है, लेकिन फ़ीस चुकाने की ताक़त उसमें नहीं है! वह ग़रीब है!

रामबंधु ने सब की बातें सुनकर फ़ैसला किया—"अगर फ़ीस देने की ताक़त नहीं है तो भी कौए को कोयल का ऋण चुकाना होगा। आज से कोयल के अण्डों को कौआ ही सेंक कर उसके बच्चों को पालना होगा। यही हम फ़ैसला देते हैं।"

इसीलिए आज भी कौए कोयल के अण्डे सेंक कर कोयल के बच्चों के पंख उगने तक पालते हैं।

अब रही, उल्लू की बात, कोयल को धोखा देने के कारण सब चिड़ियों को उससे नफ़रत होने लगा है। इस कारण से वह दिन के वक़्त सब की आँख बचाकर अपने घोंसले में छिपा रहता है और सब चिड़ियों के घोंसलों में लौट कर सोते वक़्त रात में वह अपने खाने की खोज में जाता है।

[९]
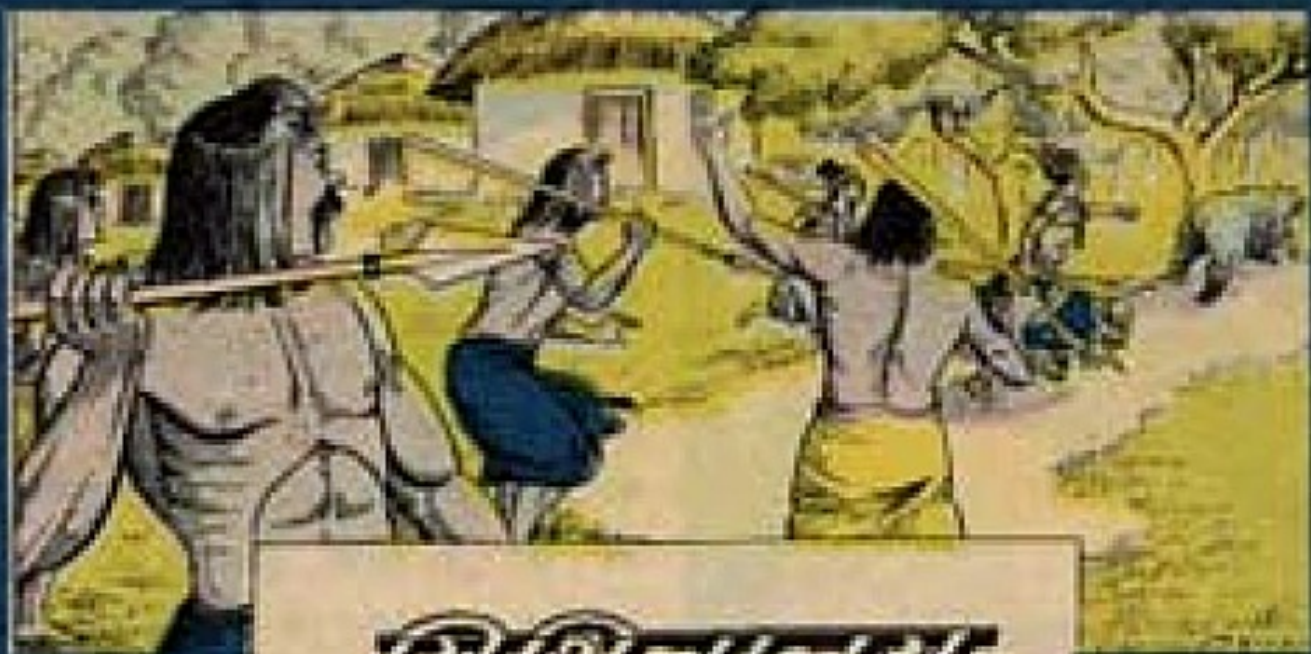
[पहाड़ी गुफा में शिखिमुखी और चित्रकेशरी को शिथिलालय का पुजारी दिखाई न दिया। वहीं पर जो भालू मिला, उसे उन्होंने नहुषसिंह के दल को सौंप दिया। नागमल्ली ने उससे थोड़ी देर तक करतब करवाये। उसे छोड़ते ही वह भीड़ पर झपट पड़ा। उसे पकड़ने के लिए शिखिमुखी और नागमल्ली उसके पीछे दौड़ पड़े। बाद—]

भालू से घायल हुए लोगों में कई स्त्रियाँ, बच्चे और युवक भी थे। उसे मारने के लिए ज्योंही युवकों ने भाले लेकर हमला किया, त्योंही वह भाग गया। शिखिमुखी और नागमल्ली उसके पीछे हो लिये। सब युवक भालू पर भाले फेंकना चाहते थे, लेकिन यह सोचकर रह गये कि कहीं शिखिमुखी और नागमल्ली को न लग जाए।

भालू अपने आगे के दो पैरों पर खड़े हो नागमल्ली पर झपटने को हुआ। नागमल्ली विचलित हुए बिना मुट्ठी बांधे वहीं खड़ी हो गयी। इस बीच में शिखिमुखी भालू के निकट पहुँचा और उसकी कमर पर ज़ोर से एक लात मारी। भालू गुर्राते हुए नीचे गिरा, झट उठकर पास के जंगल में घुस पड़ा।

शिखीमुखी यह सोचकर लौट पड़ा कि पिंड छूट गया है, लेकिन देखता क्या है,

नागमल्ली बिजली की तरह दौड़ गयी और भालू का सामना किया। उसके हाथ में एक भाला था। पीछे उसका पिता मल्लूसिंह और कुछ शबर युवक चिल्ला रहे थे कि 'रुक जाओ' लेकिन उनकी परवाह किये बिना वह आगे बढ़ी जा रही थी।

नागमल्ली की हिम्मत देख शिखिमुखी मन ही मन उसकी तारीफ़ करने लगा। फिर भी उसको लग रहा था कि वह दुस्साहस कर रही है और खतरा मोल रही है। तो भी 'नागमल्ली' चिल्लाते वह उसके पीछे दौड़ने लगा। आगे भालू, उसके पीछे थोड़ी दूर पर नागमल्ली और उसके पीछे शिखिमुखी दौड़ते देखते-देखते जंगल में गायब हो गये।

"वह भालू रूप में छिपा पुजारी है। इसमें कोई संदेह नहीं कि पुजारी कुछ मंत्र-तंत्र की क्रियाओं में सानी नहीं रखता। शिवाल, यह मेरी बेटी और तुम्हारे बेटे को मारने या उठा ले जाने के लिए इस जादू भरे रूप में आया होगा। दोनों को सम्मोहित कर साथ ले गया। वह ज़रूर कुछ न कुछ हानि कर बैठेगा, बताओ, अब हमें क्या करना है।" यह कहते मल्लूसिंह चिल्लाने लगा।

पुजारी की शक्ति पर मल्लूसिंह का जो अंध-विश्वास है वह शिवाल में नहीं है। उसे कदापि यह संदेह न हुआ कि अपने बेटे और नागमल्ली के पुजारी के पीछे दौड़ने में कोई सम्मोहन-क्रिया काम कर रही है। लेकिन उसे इस बात का डर लगा कि वे दोनों उस घने जंगल में घुस गये हैं, इसलिए उस दुष्ट पुजारी के द्वारा किसी प्रकार का छल-कपट या खतरा हो सकता है।

शिवाल यही सोच रहा था कि क्या करना चाहिए। इतने में विक्रमकेसरी तीन शबर-युवकों के साथ आया और बोला–

"शिवनाथ, मैं शिखिमुखी की मदद करने जाता हूँ। मुझे इस बात का डर नहीं कि उसे भालू के द्वारा खतरा हो सकता है। लेकिन मेरा सन्देह यह है कि शिवशासन का पुजारी यहीं कहीं चारों तरफ आसपास के जंगल में टोह लगाये बैठा होगा।"

"मैं भी यही सोचता हूँ, विक्रम! शिखी और नागमल्ली को, जहाँ भी मिले, खींचकर ले आइये।" शिवनाथ ने कहा।

"मेरे रोकते रहने पर भी नागमल्ली ध्यान दिये बिना दौड़ गयी। उससे कहिये कि मैं जल्दी बुला रहा हूँ।" ये बातें विक्रम से कहकर रुद्रसिंह ने उसकी भुजा पकड़कर रोका और फिर कहा—"वह भालू है न? मेरा संदेह है, वह पुजारी ही है। अगर वह हाथ लगा तो जान से पकड़कर यहीं न लाइये। बल्कि उसका चमड़ा निकाल कर ले आइये। उस चर्म को सुखाकर मैं अपनी देहली पर पैर पोंछने के काम में इस्तेमाल करूँगा। तभी मेरा क्रोध शांत होगा।"

विक्रमकेसरी सर हिलाते हुए, अपने अनुचरों के साथ जंगल की ओर भाग चला। जंगल में पहुँचते ही वे 'शिखिमुखी, शिखिमुखी' कहते पुकारने लगे। लेकिन उन्हें कोई जवाब न मिला। उन लोगों ने शिखी और नागमल्ली के पैरों के चिह्न ढूँढ़ना प्रारंभ किया। उस प्रदेश में जंगली जानवर और मनुष्यों के चिह्न कई दिखायी पड़े। लेकिन उनमें नागमल्ली और शिखीमुखी के चिह्नों को पहचाना कैसे?

"भालू उन दोनों को जंगल में बहुत दूर ले गया, इसलिए हमें दो दलों में बँटकर ढूँढ़ने में फायदा हो सकता है।" विक्रमकेसरी ने कहा। तुरन्त वे चारों दो-दो दल में बँटकर चिल्लाते नागमल्ली और शिखिमुखी की खोज करने लगे।

अपनी जाति के लोगों को भालू ने घायल किया था, इसलिए उसका सामना करने के ख्याल से क्रोध में आकर नागमल्ली उसका पीछा करने लगी। शिखिमुखी इस शंका से उसके पीछे भागने लगा कि अपने को आतिथ्य देनेवाले मल्हूसिंह की लड़की खतरे में फँस जाएगी। अलावा इसके वही भालू को पहाड़ी गुफा से पकड़कर शबर बस्ती में ले आया था।

शिखिमुखी यह सोचते भालू और नागमल्ली के पीछे पहाड़ी घाटी में स्थित जंगल में बहुत दूर तक दौड़ा। आखिर भालू थककर शिथिल हो गया था। वह एक शाल वृक्ष की बगल में खड़े होकर जबड़ों को फैलाते गुर्राने लगा। नागमल्ली ने उसके निकट जाकर हाथ के भाले का निशाना देखकर उसके कलेजे पर फेंका। लेकिन भालू उस चोट से बचकर पेड़ के पीछे चला गया और गुर्राते इस तरह खड़ा हो गया मानों मौका पाकर हमला करना चाहता हो।

तब तक शिखिमुखी नागमल्ली के पास पहुँचा। नागमल्ली ने उसे देखकर ही न देखने का अभिनय करते धार मोड़ लिया। इस बार भाला हाथ में ले उसको चुभाने के लिए नागमल्ली एक-एक कदम आगे बढ़ाने लगी।

"मल्ली! उसके बहुत निकट न जाओ। वह खूब थक गया है। जब भागने की कोई आशा नहीं है, तब खूँख्वार जानवर कैसा दुस्साहस कर बैठता है, यह तुम जानती हो।" शिखिमुखी ने समझाने के स्वर में कहा।

"हूँ, हूँ, मुझे नहीं मालूम। शबर युवक के कहने पर ही मालूम होगा कि कौन भालू है और कौन चूहिया।" व्यंग्यपूर्ण स्वर में नागमल्ली ने जवाब दिया। फिर शिखिमुखी की ओर घूमकर

उसे देखना ही चाहती थी कि मौका पाकर भालू उस पर झपट पड़ा। मगर झपटने के पहले उसने जो गुर्राहट की, उस आवाज को सुनते ही नागमल्ली ने अपने दोनों हाथों से भाला लेकर भालू के कलेजे में भोंक दिया। भाला उसके कलेजे में घुस गया। परंतु वह जिस तेज़ी के साथ नागमल्ली पर झपट पड़ा था उस धक्के को वह संभाल न पायी और पीछे की ओर गिर गयी। भालू ने उसका सर चबाने के लिए ज़ोर से मुँह खोल दिया।

शिखिमुखी ने कमर से झट छुरी निकाली, बिजली की भांति भालू पर कूद पड़ा, बायें हाथ से उसका कंठ पीछे खींचते हुए, दायें हाथ से छुरी उसकी गर्दन पर भोंक दी जिससे उसकी नसें कट गयीं। भालू चोट खाकर खूंख्वार बन बैठा और नागमल्ली को छोड़ गुर्राते शिखिमुखी पर झपट पड़ा। शिखिमुखी ने एक हाथ से भालू की गर्दन को पकड़ा, उसके जबड़ों में आने से अपने सर को बचाते हुए, अंधाधुंध उसके शरीर में छुरी भोंकने लगा।

इस बीच में नागमल्ली उठ खड़ी हुई। उसे शिखिमुखी पर इस बात का गुस्सा है कि उसने अपने पिता को मारकर घायल किया है, फिर भी उसको यह सोचकर

आश्चर्य हुआ कि वह उसको बचाने की कोशिश करते भालू द्वारा खतरा मोल चुका है। उसके प्रति नागमल्ली के दिल में स्नेह की लहर दौड़ पड़ी। तुरंत उसने भालू पर से अपने भाले को बड़ी कोशिश के साथ निकाला और उसकी बगल में भाले को इस तरह घुसेड़ दिया कि वह भालू के शरीर में आर-पार हो गया। भालू एक बार ज़ोर से गरज कर चित गिर गया और छटपटाने लगा।

शिखिमुखी उठ खड़ा हुआ, उसके शरीर पर भालू के नाखूनों से छोटे-छोटे घाव हो रहे थे, जिनसे खून बह रहा था। उसके बाएँ हाथ में जो छुरी थी, उससे लाल-लाल खून टपक रहा था। वह थक गया था, इसलिए थोड़ा-थोड़ा हाँफ रहा था।

नागमल्ली ने शिखिमुखी को नख-शिख पर्यन्त एक बार देखा। वह मुस्कुराते हुए तुरंत संभल गयी और गुस्सा प्रकट करते बोली—

"कोई इस छोटी-सी छुरी से भालू पर हमला कर बैठता है? मैं नहीं जानती कि तुम्हारी शबर जाति में हिम्मत और ताकत भले ही हो, लेकिन उपाय और कुशलता नहीं है। अगर तुम्हें कोई खतरा होता तो तुम्हारे पिता यह सोचते कि इसका कारण मैं हूँ और वे हम पर हमला कर बैठते।"

"उपाय और कुशलता मनुष्यों पर भले ही काम दे सकती हों, मगर खूँखार जानवरों पर नहीं। तुमको मारनेवाले भालू को मैं किस उपाय से मारकर तुम्हें बचा सकता था? उस वक्त अगर मेरे पास यह छोटी-सी छुरी भी न होती तो खाली हाथों से ही मैं उसपर हमला कर बैठता। ऐसी हालत में हिम्मत से ही काम लेना पड़ता है।" शिखिमुखी बोला।

नागमल्ली उन बातों को सुनकर चकित हुई और बोली—"तुम अपने दुश्मन की

बैरी की जान बचाने की ऐसी हिम्मत क्यों करते हो ?"

"नाहरसिंह मेरा दुश्मन नहीं। जिस हालत में हम दोनों को भाले लेकर लड़ना पड़ा, यह बात सब जानते हैं। जो बात हो गयी, वह हो गयी। अब इसको लेकर वाद-विवाद क्यों? पहले इन घावों पर पत्तों के रस मलो। खून के जमने के पहले रस निचोड़ने से जल्द घाव भर जाएगा। खून को रोककर घाव को भरनेवाली औषधी के पत्तों को क्या तुम पहचानकर ला सकती हो, या मैं ले आऊँ।" यह कहते शिखिमुखी ने चारों तरफ देखा और बड़े-बड़े वृक्षों के तले पर फैली झाड़ियों की ओर गया।

नागमल्ली ने उसको रोकते हुए कहा— "मैं भी जंगल में पैदा होकर बड़ी हूँ। दवा के पत्तों को मैं भली भांति जानती हूँ। मैं भी तुम्हारे लिए ला दूंगी। मेरी जाति के लोगों के कहे अनुसार शायद यह भालू वह पुजारी तो नहीं! देखते रहो, कहीं यह भाग न जाय!" यह कहते मुस्कुराते वह पेड़ों के बीच चली गयी और चार-पांच मिनटों में कुछ पत्ते तोड़कर दौड़ती ले आयी।

नागमल्ली के लौटने तक शिखिमुखी एक सूखे लक्कड़ पर बैठे नागमल्ली के बारे में सोच रहा था। नागमल्ली की हिम्मत ने ही नहीं बल्कि उसकी खूबसूरती ने भी शिखिमुखी को आकृष्ट किया। वह मन ही मन उसकी तारीफ करने लगा।

"क्या सोचते हो? लो ये पत्ते।" यह कहते नागमल्ली शिखिमुखी के निकट पहुँची। वह चौंककर हाथ बढ़ाने लगा। लेकिन नागमल्ली ने पत्ते उसके हाथ में न दिये— "पीठ और भुजाओं पर भी भालू ने नाखूनों से खरोंचा। वहाँ पर रस तुम कैसे मल सकते हो? मैं मलूंगी।" यह कहते

शिखिमुखी के घावों पर पत्ते का रस निकाल कर नागमल्ली बड़े प्रेम के साथ मलने लगी।

शिखिमुखी अपने घावों पर रस के गिरने से जलन व दर्द की परवाह किये बिना नागमल्ली के मुँह की ओर देखता रहा। उसे जलन के बदले बदन में शीतलता मालूम होने लगी। रस के मलने का काम पूरा होते ही, कुछ दूर जाकर घावों पर रस मलने लगी। लेकिन शिखिमुखी झट उठकर उसके पास गया, उसके हाथ से पत्तों को छीनने के लिए उसकी मुट्ठियों को खींच कर बोला—"तुमने मेरे लिए जो कहा था, वह तुम्हारे लिए भी लागू होगा। अब मेरी बारी है।" यह कहकर उसके दिये पत्तों को मसलकर उस रस को नागमल्ली के घावों पर मलने लगा। वह झूठी पीड़ा का बहाना करके कराहने लगी। पर मन ही मन वह प्रसन्न थी। आँखें बंद कर बड़े सुख का अनुभव कर रही थी।

इस हालत में घाटी के पहाड़ी भाग के पौधों में से एक विकृत कंठ की ध्वनि सुनाई दी—"मेरे बच्चो, शाबाश!" शिखिमुखी और नागमल्ली सिर उठा ऊपर देखने लगे।

"तुम दोनों को हिमालय के दोनों तरफ़, सौ कोसों की दूरी तक महाराजा और महारानी बनाने जा रहा हूँ। लो, मेरा दूत तुम्हारे पास आ रहा है। उसके द्वारा मेरे संदेश को समझ लो।"

नागमल्ली और शिखिमुखी निश्चेष्ट हो देखते रहे। उन दोनों ने आँखें विस्फारित करके चारों तरफ़ नजर डाली कि यह आवाज कहाँ से आ रही है। तब पेड़ों की डालों पर से एक मानव आकृति, उड़नेवाले पक्षी की भाँति हाथ बढ़ाकर नीचे उतरने लगी। (और है)

पिता की हत्या

हठी विक्रमादित्य पेड़ के पास लौट गया, उस ने शव को उतारकर कंधे पर डाल लिया और हमेशा की भांति मौन श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—

"राजन्, मैं नहीं जानता कि तुम किस महान शक्ति को पाने के लिए ऐसा श्रम करते हो! पर तुम को सावधान किये देता हूँ कि तुम क्षुद्र शक्तियों पर विश्वास करोगे तो महाबाहु की तरह तुम भी धोखा खाओगे! श्रम को भुलाने के लिए तुम्हें मैं महाबाहु की कहानी सुनाता हूँ। सुनो!"

बेताल यों कहने लगा—

प्राचीनकाल में गंगानदी के दक्षिणी तट पर प्रभावती नामक एक नगर था। उस नगर में एक देवी का मंदिर था। लोगों का विश्वास था कि वह देवी महिमा

वेताल कथाएँ

रखती है और अपने भक्तों की कामनाओं की पूर्ति करती है। इसलिए उस देवी के दर्शन के लिए लोग दूर दूर से आते थे। अक्सर भक्तों की कामनाएँ पूरी होती थीं। कहा जाता था कि एक दो बार देवी ने अपनी वाणी से वर भी दिये थे। जनता में ऐसा विश्वास फैल गया था कि देवी स्वयं प्रभावती नगर की रक्षा करती हैं। इसलिए शत्रु राजा भी उस नगर की ओर दृष्टि डालने से डरते थे; बल्कि उस नगर से भी डरते थे। इस कारण से प्रभावती नगर शांति और संपदा से शोभायमान था।

उस नगर में एक बार पड़ोसी राज्य से महाबाहु नामक एक डाकू भाग आया। महाबाहु साहसी और हत्यारा था, लेकिन वह जिस राज्य में रहता था, वह गरीब था। वहाँ का राजा भी लगातार उसका पीछा करता था और उस की नाकों में दम आने लगा था। डाकू ने सुना था कि प्रभावती नगर धनी है और वहाँ के राजा और प्रजा शांत स्वभाव के हैं। प्रभावती नगर की देवी के बारे में भी उसने सुन रखा था। महाबाहु का विचार था कि पहले उस देवी की कृपा प्राप्त करके वहाँ चोरी का धंधा करना है!

एक दिन सवेरे महाबाहु देवी के मंदिर में पहुँचा। मंदिर का पुजारी सवेरे ही मंदिर में आया करता था। उस दिन भी पुजारी मंदिर में आया था। पुजारी ने देखा कि हाथ में तलवार लिये कोई भयंकर मनुष्य मंदिर में आ रहा है। वह कांप उठा। झट देवी की मूर्ति के पीछे स्थित गुप्त सुरंग में छिप गया।

महाबाहु देवी की मूर्ति के सामने साष्टांग दण्डवत करके बोला—"माता! जगन्माता! मैं महाबाहु हूँ! तुम्हारा भक्त हूँ! तुम्हारा दास हूँ! मैं अपने देश,

पत्नी, सबको छोड़ तुम्हारी शरण में आया हूँ! मुझे ऐसा वर दो जिस से कोई मुझे जीत न सके।"

महाबाहु का नाम सुनते ही पुजारी का शरीर ठण्डा पड़ गया। उस ने उस डाकू के बारे में पहले ही काफ़ी समाचार सुन रखा था!

थोड़ी देर महाबाहु चुप रहा, फिर गरज कर बोला—"माता! बोलती क्यों नहीं?" लेकिन देवी के मुँह से कोई बात न निकली।

"लोग कहते हैं कि तुम भक्तों पर प्रसन्न हो कर बोलती हो! क्या तुमको खून चाहिये? लो, मेरा खून ले लो!" यह कहते महाबाहु ने तलवार से अपनी उंगली काट कर देवीजी के सामने रख दी। उंगली से टप टप खून गिरने लगा!

तब भी देवी के बोलते न देख महाबाहु क्रोध से चिल्ला उठा—"तो तुम में कोई महिमा नहीं है! दुनिया को तुम धोखा देती हो! मैं अभी तुम्हें टुकड़े टुकड़े कर देता हूँ।"

तुरंत देवी के मुँह से बोल फूटे! "बेटा, जल्दबाजी न करो! मैं तुम्हारी भक्ति पर प्रसन्न हूँ! तुमको मन चाहा वर देती हूँ।"

ये बातें पुजारी ने कही थीं। वह जिस सुरंग में छिपा था, उस में एक नाला है! वहाँ से देवी की मूर्ति से होकर मुँह तक छोटा सा बिल है। इसलिए पुजारी की बातें डाकू को देवी की बातों सी लगीं। अलबत्ता इसके महाबाहु को गर्भगृह में उसे छोड़ कोई दिखाई न देता था! महाबाहु फिर देवी को साष्टांग दण्डवत् करके बोला—"माता, मैं धन्य हो गया हूँ! धन्य हूँ! तुम्हारा अनुग्रह मुझे मिल गया है।" यह कहते डाकू वहाँ से चल दिया।

पुजारी ने यह बात किसी से नहीं बतायी, लेकिन प्रभावती नगर में यह खबर फैल गयी कि वहाँ पर महाबाहु नामक दुष्ट डाकू आया हुआ है और उसे देवी का वरदान मिला है कि उसे कोई जीत नहीं सकता। क्यों कि महाबाहु ने अपनी इज्जत और सुविधा के लिए खुद इस बात का प्रचार किया था।

महाबाहु यह सोच कर मनमाने चोरियाँ करने और डाका डालने लगा कि काली देवी उसके पक्ष में है। कभी कभी हत्याएँ भी कर बैठता था, लोग भी यह सोच कर उसका अहित नहीं करते थे कि वह डाकू देवी का प्रिय भक्त है। जब राजा ने महाबाहु का शिकार कर उसका अंत करना चाहा, तब मंत्री वीरभद्र भट ने राजा को यही सलाह दी कि ऐसा काम वे स्वप्न में भी न सोचें, क्यों कि देवी से डाकू ने अजेय बने रहने का वरदान पाया है। वह मानवों के प्रयत्नों के सामने न झुकनेवाला है।

कुछ दिन बाद एक औरत एक दिन सवेरे छोटे शिशु को ले आयी और गर्भगृह में देवी के चरणों में छोड़कर जाने लगी। यह देख पुजारी ने उसको रोक कर पूछा—"तुम कौन हो? यहाँ क्या करती हो! यह शिशु कौन है?"

"मैं महाबाहु की पत्नी हूँ। मेरे पति के भागने के बाद यह शिशु पैदा हो गया है। मेरे पति ने जो दुराचार किये हैं, उनका बदला लोग मुझ से और मेरे शिशु से चुकाना चाहते हैं। इसलिए मैं इस शिशु को यहाँ छोड़ अपने रास्ते चली जाऊँगी। अतः कृपया इस शिशु की रक्षा कर के पुण्य पाइये।"

यह कहकर वह औरत चली गयी।

उस शिशु को देखने पर पुजारी के मन में एक विचार आया। वह उस शिशु को अपने घर ले गया और लोगों में यह

अफ़वाह फैला दी कि देवी ने उसे यह शिशु प्रदान किया है। उसका देवीदत्त नाम-करण किया और पालन-पोषण करने लगा। पुजारी ने उस बालक को अतिलौकिक सभी विद्याएँ सिखायीं।

देवीदत्त को बराबर पुजारी समझाता रहा कि "दुष्टों का नाश करने के लिए ही देवी ने मुझे तुमको प्रदान किया है। महाबाहु जैसे दुष्टों का नाश करने तुमने जन्म लिया है। यह देवी का आदेश है।"

यह खबर भी सब जगह फैल गयी कि देवीदत्त के हाथों में महाबाहु जैसे दुष्टों की मौत होगी। यह खबर सुनते ही महाबाहु भी अधीर हो उठा। क्यों कि उसे देवी की महिमा पर अपार विश्वास है। उसका यह भी विश्वास है कि देवी के प्रभाव के कारण ही नगर के लोग उसका कुछ बिगाड़ नहीं कर पा रहे हैं। इसलिए महाबाहु देवीदत्त से बच कर घूमता रहा।

देवीदत्त लगभग २० साल का हो गया था। एक दिन राजकुमारी पालकी में बैठ, सदल देवीजी के मंदिर में जा रही थी, उस वक्त महाबाहु राजकुमारी की ओर लपका। राजभट भी महाबाहु का सामना करने में संकोच करने लगे। उस वक्त थोड़ी दूर पर देवीदत्त था, उसे यह समाचार मालूम होते ही तलवार लेकर महाबाहु पर टूट पड़ा। दोनों में भयंकर युद्ध हुआ। उसको यह मालूम होते ही कि उस पर हमला करनेवाला देवीदत्त है। महाबाहु भयभीत हो गया। उसके हाथ व पाँव काँपने लगे। इसलिए देवीदत्त ने बड़ी आसानी से महाबाहु का वध कर डाला।

महाबाहु की मौत का समाचार मिलते ही शहर के निवासी खुशी से फूल उठे। नगर-भर में उत्सव मनाये गये। राजा देवीदत्त के पराक्रम पर मुग्ध हुआ और उसने राजकुमारी का विवाह देवीदत्त से किया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा— "राजन, पुजारी के व्यवहार के बारे में मेरे कई संदेह हैं। उसने महाबाहु के वरदान के संबंध में लोगों को असली बात क्यों नहीं बतायी? कह दी होती तो लोग कभी उसे क्या मार न डालते? अलावा इसके महाबाहु को मारने के लिए पुजारी उसी के पुत्र को इस काम में लगा कर पितृ हत्या का कारक क्यों बन बैठा? इन प्रश्नों का समाधान जानते हुये भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमादित्य ने जवाब दिया— "देवी के कारण देश और प्रजा भी कई लाभ पाते हैं। देवी की महिमा पर विश्वास होने के कारण ही वह नगर शत्रु के भय से बच रहा है। ऐसी हालत में पुजारी यह प्रकट करे कि देवी के मुँह से जो बातें निकलीं, वे पुजारी के मुँह से निकली हुई हैं; तो देवी के प्रति लोगों का विश्वास जाता रहेगा। इस से जो हानि होगी, इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। इसीलिए पुजारी ने महाबाहु को दिये गये वरदान को गुप्त ही रखा। अब रही, महाबाहु की बात, ऐसे दुष्ट को कोई भी मारे, वह सत्कार्य ही होगा। इस काम में महाबाहु के पुत्र को नियुक्त करना संयोग की ही बात थी। उसकी जिम्मेदारी पुजारी पर न थी! अगर पितृहत्या करने का भाव पैदा होता तो वह देवीदत्त के मन में ही पैदा होता! मगर वह खुद नहीं जानता था कि महाबाहु उसका पिता है। पुजारी की दृष्टि से देखा जाय तो महाबाहु की मौत दुष्टों को दण्ड देना ही होता है। लेकिन हत्या का अपराध नहीं।"

राजा के मौन-भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

विचित्र चीज़ें

एक जंगल के बीच एक गुफा में एक विचित्र बूढ़ा रहता था। उसके पास तीन विचित्र चीज़ें थीं। एक चीज़ गायब करनेवाली टोपी थी। उसे सर पर रखते ही बूढ़ा इस तरह गायब होता था कि वह किसी को दिखायी न देता। उसके पास एक मिट्टी का बर्तन था। उससे जब चाहे, जैसा खाना चाहे, वही मिल जाता था। बूढ़े के पास एक लाठी भी थी, वह जिस पर फेंका जाता, उसे मार कर लौट आती। उस निर्जन जंगल में बूढ़ा किसी की आँख में नहीं पड़ता था, किसी खूंख्वार जानवर का डर नहीं रखता था और खाने की तकलीफ़ के बिना आराम से दिन काटता था।

दिन बीतते गये। एक बार एक चोर उस गुफा के निकट आया। जंगल पारकर थोड़ी दूर जाने से एक नदी पड़ती थी, उसके किनारे एक नगर बसा था। उस नदी पर मेला लगा था। लाखों आदमी वहाँ पर जमा थे। चोर ने सोचा कि मेले में खूब चोरियाँ की जा सकती हैं। यह सोच कर वह अपनी गुफा से निकल पड़ा।

किसी आदमी की आहट के पाते ही बूढ़े ने टोपी सर पर रख ली। वह देखते-देखते गायब हो गया। गुफा के पास पहुँच कर चोर ने देखा, वहाँ पर कोई नहीं है। उसे संदेह हुआ। क्यों कि दूर से उसने देखा था कि गुफा के पास कोई टहल रहा था। उस आदमी को छिपने के लिए गुफा में जगह भी न थी।

इसलिए चोर गुफा पार करके आगे बढ़ा। थोड़ी देर बाद लौट कर गुफा के सामनेवाले टीले के पीछे छुप गया। चोर गुफा की ओर ताकता रहा।

पूरन राम

बूढ़े ने वहाँ पर किसी को न देख अपनी टोपी निकाली और बगल में रख ली, चोर ने सोचा कि ऐसी टोपी इस के पास रही, तो बड़ी आसानी से चोरी कर सकता है। इसलिए वह इस इंतज़ार में था कि बूढ़ा कहीं चला जाय तो टोपी लेकर भाग जाय।

शाम का समय था। बूढ़ा गुफा में टोपी रखकर बाहर निकला। मौका पाकर चोर ने टोपी उठा ली, शायद ही, घोंसले-वाले पेड़ों की ओर चल पड़ा।

बूढ़े ने लौटकर देखा, टोपी वहाँ पर न थी। उसकी परेशानी कहते न बनती थी।

थोड़ी देर बाद बूढ़े को भूख लगी। उसने मिट्टी का बर्तन निकाला। इस में से खाना लेकर खाने लगा।

बूढ़े को औंधे मुँह पड़े बर्तन से खाना निकाल कर खाते एक दूसरे चोर ने देख लिया। लेकिन उस चोर की समझ में न आया कि चोर को बर्तन में से खाना कैसे मिलता है! इसलिए दूसरा चोर भी ताक में बैठा रहा। बूढ़े के गुफा से बाहर आते ही बर्तन लेकर भाग गया।

अपने बर्तन को भी खोकर बूढ़ा घबरा गया। अब उसके पास सिर्फ लाठी बच रही। लाठी तो उसका पेट नहीं भर

सकती थी। लेकिन खूँख्वार जानवरों से उसकी रक्षा कर सकती थी। फिर भी जो भूख से तड़पकर मरनेवाला है, उसे खूँख्वार जानवरों का डर ही क्या था!

उस बूढ़े के पास एक जवान आ पहुँचा और बोला—"मैं भूख से मरा जा रहा हूँ, खाने को कुछ दे सकते हो?"

"मैं ही भूख से मरने को तैयार हूँ। मेरे अक्षय पात्र और अद्भुत टोपी को चोरों ने चुरा लिया है, अक्षय पात्र मेरे पास होता तो मैं तुम जैसे कई लोगों को खाना खिलाता। लो, मेरे पास केवल एक लाठी बची है। इसे ले जाओ।" बूढ़े ने कहा।

बूढ़े की विचित्र चीज़ों को चुराने का समाचार सुनकर उस युवक ने बताया—"दादाजी, यह लाठी मुझे दे दो। इसकी मदद से मैं तुम्हारी चोरी की चीज़ों को ढूँढ़ ला देता हूँ।"

बूढ़े ने मान लिया।

युवक वह लाठी लेकर मेले की ओर निकला। थोड़ी दूर चलने पर उसके कानों में ये बातें सुनाई पड़ीं—"अरे मुसाफिर! तुम्हारे पास जो कुछ है, यहाँ रख दो।" बातें तो सुनाई दीं, लेकिन कोई दिखाई न दिया। युवक को मालूम हो गया कि टोपी चुरानेवाला

बदमाश नहीं है। उसने हिम्मत के साथ कहा–

"मेरे पास बहुत कुछ है। पहले तुम मेरे सामने आ जाओ!"

चोर अपने सर पर की टोपी निकालकर प्रत्यक्ष हो गया।

तुरंत युवक ने अपने हाथ की लाठी उस पर फेंक दी। चोर उसके प्रहार से डरकर भाग गया।

चोर से टोपी लेकर वह आगे बढ़ा।

जवान फिर जब आगे बढ़ा, उसे लगा कि अक्षय पात्र चुरानेवाले का पता लगाना मुश्किल है। लेकिन वह भी आसानी से हाथ लगा।

नदी के किनारे पर वह चोर एक बड़ी झोंपड़ी बना कर उस में रहता था। आने-जानेवाले यात्रियों में अन्न का दान करते सब की तारीफ़ और आशीर्वाद पाता था। उसके सामने एक डिबिया रखी थी। लोग खाने के बाद उसमें दक्षिणा डालते थे। उसे दानी कहकर तारीफ़ करते घर लौटते थे।

वह युवक सर पर टोपी रखकर गायब हो रसोई में पहुँचा। उस में चोर के अलावा कोई नहीं जा सकता था। कोई जाता तो रहस्य का पता चलता। क्यों कि उस में मिट्टी के बर्तन के अलावा कुछ नहीं था। इसीलिए किसी को अंदर जाने की अनुमति न थी।

वह युवक जब बर्तन लेकर बाहर निकला, तब चोर ने उसे देख लिया। उसे चोर दीखता न था, लेकिन बर्तन और एक लाठी हवा में तैरते आ रहे थे।

"कौन है, वह! बाहर आओ।" चोर चिल्ला उठा। दूसरे ही क्षण लाठी ने उस चोर को मार डाला।

इस तरह उस युवक ने बूढ़े की विचित्र चीज़ों को फिर पा लिया और उनको बूढ़े के हाथ में सौंप कर अपने रास्ते चला गया।

संतरे

कई हजार साल पहले की बात है। पश्चिम देश में एक राजा था। उसके एक लड़की थी। वह बड़ी अच्छी और सुंदर थी। जब वह सयानी हो गयी, तब वह एक अनोखी बीमारी का शिकार हुई। दिन ब दिन वह सूखती जा रही थी। राजा ने कई वैद्यों को बुला भेजा, सब ने जांच की, लेकिन एक भी उस बीमारी का पता न लगा पाया। राजा ने ऐलान किया कि जो राजकुमारी को चंगा करेगा उसे राजकुमारी के वजन के बराबर सोना दे उसके साथ विवाह किया जाएगा। फिर भी कोई फायदा न हुआ।

एक-दो बार वैद्यों ने राजकुमारी की परीक्षा की और बताया–"यह खतरे की बीमारी नहीं है। इसका इलाज हम जानते हैं। लेकिन वह चीज हमारे देश में नहीं मिलती। अगर राजकुमारी तीन संतरे खाएगी तो बिलकुल चंगी हो जाएगी।"

"संतरे कैसे? क्या होते हैं? कहाँ मिलते हैं?" राजा ने वैद्यों से पूछा। क्यों कि उस देश में संतरे के पेड़ नहीं उगते थे और न किसी ने उन पेड़ों को देखा ही था, इसलिए उसके बारे में कोई कुछ न जानता था।

"वे फल पूर्वी खंड में बहुतायत से मिलते हैं! अगर कोई वहाँ जानेवाला हो तो उसके आने-जाने में चौदह सप्ताह लगेंगे।" वैद्यों ने कहा।

यह बात मालूम होते ही राजा ने ढिंढोरा पिटवा दिया–"पूर्वी खंड में जाकर जो व्यक्ति चौदह सप्ताहों के अंदर तीन संतरे लाएगा उसके साथ मैं अपनी पुत्री का विवाह करूँगा।"

उस छोटे-से राज्य में एक गरीब किसान की औरत थी। उसके तीन

बेटे थे। बड़े दोनों आलसी थे। तीसरा अपनी माँ के साथ मेहनत करके परिवार का पोषण करता था। वह बड़ा ईमानदार, विनयशील और हिम्मतवर भी था।

राजा का ढिंढोरा सुनते ही बड़े बेटे ने माँ के पास जाकर कहा—"माँ, मैं पूर्वी खंड में जाकर संतरे लाऊँगा और राजकुमारी के साथ शादी करूँगा। उसके बाद हम आराम से ज़िन्दगी काट सकते हैं।"

माँ इस के लिए तैयार हो गयी और उसकी यात्रा के लिए आवश्यक खाने की सामग्री बांध कर दी। बड़े लड़के ने सात सप्ताह सफ़र किया और सात सप्ताहों के अंदर पूर्वी खंड में पहुँचा, संतरे के बगीचे में पहुँचकर तीन बढ़िया संतरे तोड़कर टोकरी में रख दिये। फिर सात सप्ताह सफ़र करके अपने गाँव पहुँच गया। राजभवन के आधे कोस की दूरी पर जो उद्यान था, उसमें वह आराम करने के लिए बैठ गया।

उसी समय एक बूढ़ी उधर चली आयी और बड़े बेटे के पास ठहरकर पूछा—"इस टोकरी में क्या है, बेटा?"

"क्या, मेंढक है!" बड़े ने घमंड में आकर झिड़कते हुए जवाब दिया।

"तथास्तु!" कहकर बूढ़ी आगे बढ़ी।

यात्रा की थकावट दूर होते ही टोकरी लेकर वह राजमहल में गया, उसने फिर कभी टोकरी खोलकर नहीं देखा, राजा के सामने टोकरी रखकर बोला—"संतरे लाया हूँ! जल्दी राजकुमारी के साथ मेरा विवाह कीजिये।"

राजा ने टोकरी खोलकर देखा। उसमें से तीन मेंढक बाहर कूद पड़े। टोकरी में संतरे नहीं थे।

"इस दुष्ट को कोड़े से मारकर अंधेरी कोठरी में डाल दो।" राजा ने गुस्से में आकर अपने भटों को आदेश दिया।

चौदह सप्ताह बीत गये; पर अपने बड़े भाई के लौटते न देख उस गरीब किसान-औरत का दूसरा बेटा संतरे लाने निकल पड़ा। वह भी पूर्वी खंड में जाकर तीस संतरे लेकर चौदह सप्ताह में गाँव लौटा। रास्ते में वह भी उसी उद्यान में आराम करने बैठ गया जिस में उसका बड़ा भाई ठहर गया था।

बूढ़ी ने उधर आकर फिर पूछा—"टोकरी में क्या है, बेटा?

"तुम्हें क्या मतलब, साँप है!" दूसरे बेटे ने जवाब दिया।

"तथास्तु!" कहकर बूढ़ी चली गयी।

दूसरे बेटे ने अपनी टोकरी राजा के सामने रखकर कहा—"संतरे लाया हूँ। जल्दी राजकुमारी के साथ मेरा विवाह करवा दीजिये।"

लेकिन टोकरी खोलने पर उसमें से साँप निकल आये! राजा ने दूसरे को भी खूब कोड़े लगवाकर जेलखाने में डलवा दिया।

चौदह सप्ताह बीत गये। अपने दोनों बड़े भाइयों को वापस न लौटते देख तीसरा अपनी माँ से आज्ञा लेकर खुद संतरे लाने निकल पड़ा। वह भी अपने भाइयों की तरह पूर्वी खंड में जाकर

संतरे तोड़ लाया।" वह टोकरी लेकर चौदह सप्ताह के बाद लौटा। उसके भाइयों ने राजा के जिस उद्यान में आराम किया, वह भी वहीं बैठ आराम करने लगा। बुढ़ी फिर उधर आ पहुँची और बोली—"टोकरी में क्या है, बेटा?"

"संतरे हैं, नानी! राजकुमारी के इलाज के लिए ले जा रहा हूँ।" तीसरे ने जवाब दिया।

"और क्या? राजकुमारी से शादी करनेवाले हो न?" बुढ़ी ने कहा।

तीसरे ने हँसकर कहा—"मुझ-जैसे ग़रीब के साथ राजा अपनी बेटी का विवाह क्यों करेंगे? मुझे थोड़ा धन दे तो काफ़ी है! मेरी माँ बुढ़ापे में सुख से दिन काटेंगी। इस अवस्था में उनको तकलीफ़ झेलते देख मुझे बहुत दुख होता है, नानी!"

"राजा को अपने वचन का पालन करना होगा। इससे बचने के लिए वह तुमको तीन असाधारण काम बताएँगे। उन कामों को साधने के लिए मैं तुम्हें तीन चीज़ें देती हूँ।" यह कहकर बुढ़ी ने उसे एक कोड़ा, एक चाँदी की सीटी, एक सोने की अंगूठी दी, और उनके इस्तेमाल करने के तरीके भी बताये।

तीसरे ने राजा के सामने टोकरी रखकर कहा—"महाराज! संतरे लाया हूँ। राजकुमारी का इलाज कराइये।"

टोकरी खोलकर राजा ने देखा—उसमें सोने के रंग के फल थे। राजा बहुत प्रसन्न हुआ, राजवैद्यों को बुलाकर बोला—"ये संतरे हैं! अब राजकुमारी का इलाज कीजिये।"

वैद्यों ने एक फल के छिलके निकाल कर राजकुमारी को खिलाया, वह एक संतरा खाते ही झट बिस्तर पर बैठ

गयी। दूसरे फल के खाते ही उस के चेहरे में एक अपूर्व चमक आयी। तीसरे फल के खाते ही वह बोल उठी—"इस फल लानेवाले के साथ मेरी शादी कीजिये।"

राजा ने तीसरे की ओर देखा। उसका चेहरा मुरझा गया था। सब लोग बड़ी उत्सुकता से राजा की ओर ताक रहे थे कि राजा अपने वचन का पालन करके राजकुमारी का विवाह उस युवक के साथ करेगा या नहीं।

राजा ने तीसरे की ओर तिरछी नजर से देखते हुये कहा—"मेरी बेटी का विवाह तुम्हारे साथ करने में मुझे कोई एतराज नहीं है, लेकिन पहले मैं जो तीन काम बताने जा रहा हूँ, तुमको करने होंगे।"

"बताइये, मुझ से हो सकेगा तो करूँगा।" तीसरे ने जवाब दिया।

"पहला काम यह है कि उद्यान में से सब चिड़ियों को भगा दो, उस में एक भी न रहे, पक्षियों के कारण उद्यान में बड़ा शोरगुल होता है।" राजा ने कहा।

तीसरे ने उद्यान में जाकर कोड़े को झाड़ दिया। उस आवाज को सुनते ही सब पक्षी उड़ गये।

"उद्यान में से सब चिड़ियों को भगा दिया है। महाराज! जाकर देख आइये।" तीसरे ने कहा।

राजा ने देखा। फिर कहा—"उस वन में खरगोश बहुत हैं। उन सबको एक जगह इकट्ठा करने हैं।"

तीसरे ने उद्यान में जाकर सीटी बजाना शुरू किया, बगीचे के तीन सौ खरगोश उस के चारों ओर जमा हो गये। वह सीटी बजाते राजमहल की ओर गया। उसके साथ खरगोश भी चले गये।

"महाराज! उद्यान के सभी खरगोश ये ही हैं।" तीसरे ने कहा।

राजा को कुछ कहते न बना।

"क्या यह बताकर मुझे दे सकते हो कि तुम में मेरा प्यारा खरगोश कौन है?"

"ऐसा ही दूँगा, लेकिन पहले राजकुमारी की उंगली में यह अंगूठी पहनाने दीजिये।" यह कहते तीसरे ने अंगूठी निकाली।

"ऐसा ही करो!" राजा ने कहा। वह उस अंगूठी के बारे में कुछ नहीं जानता था।

तीसरे ने राजकुमारी की उंगली में अंगूठी पहना दी। अंगूठी छोटी हो गयी और राजकुमारी को दर्द होने लगा। वह पीड़ा से हाथ हिलाते—"मर रही हूँ। पहले उस युवक के साथ मेरी शादी कीजिये।" राजकुमारी चिल्लाने लगी।

"जरूर करूँगा, तुम दोनों की शादी करूँगा।" घबराते राजा ने कहा।

तुरंत अंगूठी राजकुमारी की उंगली के बराबर हो गयी। इसके बाद राजा को अपनी पुत्री का विवाह उस युवक के साथ करना पड़ा। राजा के दामाद के भाइयों का जेल में रहना राजा के लिए अपमान की बात थी। वे छोड़ दिये गये। तीसरा बेटा एक अच्छा महल बनाकर माँ के साथ सुखी रहने लगा।

शीशे का टुकड़ा

पुराने ज़माने में वल्लभी नगर में एक बड़ा जौहरी था। वह रत्नों की पहचान में अपनी सानी नहीं रखता था। इसलिए राजा भी उसकी सलाह लिए बिना रत्न नहीं खरीदता था। नगर-भर में वह जौहरी सच्चे और कुशल के रूप में माना जाता था।

एक दिन उस जौहरी के पास एक परदेशी आया और बोला—"महाशय, मेरा नाम सदाशिव है। मैं आपके पास व्यापार-संबंधी काम पर आया हूँ। मेरे परिवार में बहुत ज़माने से एक बेशकीमती हीरा रहता आया है। मैं अब ऐसे रत्न को पास में रखने की हैसियत नहीं रखता। इसलिए मैं उसे बेचकर अपनी गरीबी दूर करना चाहता हूँ।"

सदाशिव अव्वल दर्जे का मायावी था। उसकी बातों में ज़रा भी सच्चाई न थी। उसे एक शीशे का टुकड़ा मिला। उसे एक कुशल कारीगर से तराश कराकर, हीरे की तरह चमकवा दिया। जो लोग हीरे की पहचान करना नहीं जानते, वे उसे देख हीरा ही समझने की भूल कर सकते थे।

"देखूँ, उस हीरे को एक बार देखने दीजिए।" हीरे के व्यापारी ने पूछा।

सदाशिव ने कपड़ों की तहों में से शीशे के टुकड़े को बड़ी सावधानी से निकालकर हीरे के व्यापारी के हाथ में दिया। व्यापारी ने उसकी जाँच करके कहा—"सच्ची बात कहने में मुझे संकोच होता है, यह हीरा नहीं, शीशे का टुकड़ा है।"

सदाशिव ने आवेश में आकर कहा—"क्या बताया? पीढ़ियों से हमारे घर में रहनेवाला यह हीरा शीशे का टुकड़ा है? लोग कहते हैं कि वल्लभी नगर में आप-जैसे

कोई हीरा-पारखी दूसरा नहीं है। मेरी समझ में नहीं आता कि आप कैसी भूल कर रहे हैं?"

हीरे का व्यापारी चुपचाप शीशे का टुकड़ा सदाशिव के हाथ में दे उसकी ओर ताकने लगा।

पर सदाशिव ने उसे लेने से इनकार किया और कहा—"मैं जबरदस्ती आपसे यह हीरा खरीदवाना नहीं चाहता। कुछ समय तक आप इसे अपने पास रखियें। मौका मिलने पर इसे बिकवा दीजिये।"

"अच्छा! आपकी इच्छा के अनुसार मैं अपने पास ही रखूँगा। मैं कह नहीं सकता कि जरूर बेच सकूँगा। लेकिन कोशिश जरूर करूँगा। आप इसे कितने में बेचना चाहते हैं?" हीरे के व्यापारी ने पूछा।

"आठ सौ चाँदी की मुद्राओं में बेचना चाहता हूँ, इससे कम में नहीं।" यह कहकर सदाशिव विदा ले चला गया।

हीरे के व्यापारी ने उस शीशे के टुकड़े को एक कोने में रख दिया। उसने सोचा कि जब सदाशिव वापस आकर पूछेगा, तब दिया जाएगा।

इसके कुछ दिन बाद विन्ध्य के राजा की तरफ से एक दूत काशी नगर में

आया। शहर में खबर फैल गयी कि बड़ी रानी के लिए हीरे का सौदा करने यह दूत आया है। उस दूत ने हीरे के व्यापारी के पास आकर पूछा—"आपके पास हमारी रानी की हीरक-माला के लिए एक पदक चाहिए; कोई बड़ा हीरा आपके पास हो तो दिखादें।"

उस व्यापारी के पास यदा-कदा राजदूत आकर हीरे खरीद ले जाते थे; इसलिए उस व्यापारी ने उत्तम जाति के हीरों को राजदूत के सामने रख दिये।

लेकिन उनमें से एक भी राजदूत को पसंद न आया। बल्कि इससे ऐसा मालूम होता था कि वह व्यक्ति रत्नों के बारे में बिलकुल जानकारी नहीं रखता है। एक से बढ़कर एक उत्तम हीरों को उसने पसंद नहीं किया।

इतने में हीरे के व्यापारी को महाशिव का दिया हुआ शीशे का टुकड़ा याद आया। उसके मन में यह विचार आया कि विदेश का राजदूत उसे देख क्या कहेगा! इसे दिखाकर उसकी इच्छा जान ले। यह सोचकर उसने कहा—"यह भी देख लीजिये, मगर यह हीरा मेरा नहीं है। किसी ने इसे बेचने के लिए दिया है; इसकी गारंटी मैं नहीं दे सकता।"

सिंहल के राजदूत ने उसकी जांच करके कहा—"मुझे इसी तरह का चाहिए। देखने में भी बड़ा है; खूब चमकता भी है. इसका मूल्य क्या होगा?"

व्यापारी ने सोचा, सदाशिव ने आठ सौ चांदी की मुद्राएँ बतायीं। लेकिन सिंहल का राजदूत इसे सचमुच हीरा मानता है। अगर मैं उसका मूल्य आठ सौ मुद्राएँ बतलाऊं तो शायद हो सकता है कि उसका मूल्य कम समझे। यह सोचकर हीरे के व्यापारी ने उसका मूल्य दुगुना करके सोलह सौ चांदी की मुद्राएँ बताया।

सिंहल के राजदूत ने उस मूल्य को स्वीकार किया और कहा—"मैं इस हीरे को सोलह सौ मुद्राएँ देकर खरीद लूंगा। इस वक्त मैं चार सौ मुद्राएँ अग्रिम देता हूँ। हमारे राजा की स्वीकृति लेकर एक सप्ताह के अन्दर लौटकर बाकी मुद्राएँ चुकाकर इस हीरे को ले जाऊँगा। इस बीच में आप किसी को न बेचें, इन शर्तों का एक दस्तावेज लिखकर आप मुझे दे दीजिये।"

"आप की मर्जी!" यह कहकर हीरे के व्यापारी ने सिंहल के राजदूत की इच्छा के अनुसार एक पत्र लिखकर दिया। उस पत्र की शर्तें ये थीं—सिंहल का राजदूत अगर एक सप्ताह के अन्दर लौटकर बारह सौ मुद्राएँ चुकाकर हीरे को न ले जायगा तो अग्रिम में दी हुई चार सौ मुद्राओं से उसे हाथ धोना पड़ेगा। अगर एक सप्ताह के अन्दर वह व्यापारी उस हीरे को किसी दूसरे के हाथ बेचे तो उसने जो अग्रिम की रकम ली है, उससे दुगुनी मुद्राएँ देनी पड़ेंगी।"

ये शर्तें हीरे के व्यापारी को कुछ अजीब-सी लगीं। परंतु इस घटना के तीन दिन बाद सदाशिव ने आकर पूछा—"क्या मेरा हीरा बिक गया?"

हीरे के व्यापारी के मन में शंका हुई कि इसमें कोई छल है, पर उससे कुछ जवाब देते नहीं बना। वह सोच में पड़ गया।

"मुझे मालूम हुआ है कि इस नगर में सिन्ध राजा का दूत आया हुआ है और वह हीरे खरीद रहा है। अगर आपने अब तक मेरा हीरा नहीं बेचा है तो कृपया आप मुझे वह हीरा दे दीजिये। मैं उसे दिखाऊँगा।" सदाशिव ने कहा।

हीरे का व्यापारी आफ़त में फँस गया। शीशे के टुकड़े को सदाशिव को दे, तो सिन्ध का राजदूत एक सप्ताह के अन्दर आकर आठ सौ मुद्राएँ शर्त के अनुसार ले जाएगा। अगर वह बतावे कि उस शीशे के टुकड़े का सौदा सोलह सौ मुद्राओं में पटा है तो सदाशिव पूरी रकम माँग बैठेगा। इसलिए उस हीरे के व्यापारी ने सोचा कि शीशे के टुकड़े को सदाशिव के कहे अनुसार मूल्य देकर, दुगुने दाम पर सिन्ध के राजदूत को बेचना लाभदायक होगा।

"आपने आठ सौ चाँदी की मुद्राएँ माँगी है न? देता हूँ, ले लीजिये।" हीरे के व्यापारी ने कहा।

सदाशिव ने आठ सौ मुद्राओं को गिनते हुए हीरे के व्यापारी का मज़ाक उड़ाया—"आप ने तो कहा था कि वह हीरा नहीं, शीशे का टुकड़ा है।" मुद्राएँ लेकर सदाशिव चला गया।

इसके बाद एक सप्ताह बीता, एक महीना गुज़रा, पर सिन्ध का राजदूत नहीं आया। शीशे का टुकड़ा हीरे के व्यापारी के पास रह गया। हीरे का व्यापारी यह सोचकर मन ही मन दुःखी हुआ कि इतना मशहूर हीरे का व्यापारी होते हुए भी एक शीशे के टुकड़े के पीछे उसने चार सौ चाँदी की मुद्राएँ खो दीं।

गयी। तुमसे सलाह पूछने आया हूँ।" अच्युतानंद ने कहा।

"यह कौन बड़ी बात है? हमारी दुधारू गाय को ले जाइये।" कनकवल्ली ने कहा।

अच्युतानंद गंगाधर की गाय को हाँककर अपनी कुटी में ले गया। थोड़ी देर बाद गंगाधर शास्त्री घर पहुँचा. अपनी बेटी की करतूत पर आग-बबूला हो उठा।

कनकवल्ली ने शांत स्वर में जवाब दिया–"कामनाओं से अच्युतानंद दूर रहकर आत्मत्याग न करता तो आप मेरा विवाह उनके साथ कर देते! आपने यह बात कई बार मुझ से कही। पिताजी, वे आशा और कामना के जाल में फंस गये हैं। चूहों को मारने के लिए उन्होंने जो बिल्ली मांगी तब मैंने गाभिन बिल्ली दी। बिल्ली के बच्चों के लिए दुधारू गाय दी। उस गाय का पालन-पोषण करना उनसे नहीं बनता तो मैं ही खुद जाकर संभाल लूँगी। इस तरह उनकी आशाएं बढ़ती हैं, लेकिन घटती नहीं।"

गंगाधर शास्त्री अपनी पुत्री की दूरदृष्टि पर चकित रह गया। कनकवल्ली ने जो सोचा था, वही हुआ। अच्युतानंद कुछ दिन बाद लौट आया और बोला–"गाय का पोषण मुझ से नहीं बनता, क्या करूँ?"

"यह कौन बड़ी बात है? मैं ही खुद आकर देखभाल करूँगी।" यह कहकर उसके पीछे चली गयी। वह गाय को चराती, दूध दुहती और साथ ही रसोई बनाकर उसे खिलाती। सारी कुटी साफ करके कनकवल्ली ने उसकी शोभा बढ़ायी।

एक दिन गंगाधर शास्त्री अच्युतानंद की कुटी में आया और बोला–"मेरी बेटी जिस काम के लिए आयी थी, वह हो गया न? अब मैं उसकी शादी करना चाहता हूँ।" यह कहकर गंगाधर कनकवल्ली और गाय को लेकर चला गया।

अच्युतानंद की जिन्दगी सूनी मालूम होने लगी। उसे अकेलापन खटकने लगा। उसे लगा कि कनकवल्ली से शादी न करें तो उसका भविष्य अंधकारमय हो जाएगा।

दूसरे दिन सुबह अच्युतानंद गंगाधर शास्त्री के घर पहुँचा और निवेदन किया—"महाशय, आप अपनी बेटी की शादी करने के प्रयत्न में हैं न? मेरे साथ ही उसका विवाह करने की कृपा कीजिये।"

"अच्युत! तुम सांसारिक माया-मोह को छोड़कर अरण्यवास करते हो! देखते देखते मैं अपनी लड़की का विवाह एक आश्रमवासी के साथ कैसे करूँ? तुम कोई जीने का रास्ता निकालो, तो मुझे अपनी लड़की देने में कोई एतराज नहीं।" गंगाधर ने कहा।

तुरन्त अच्युतानंद राज-दरबार में गया और राजा से निवेदन किया—"महाराज, आप मेरे पांडित्य की परीक्षा कराकर अपने दरबार में स्थान दीजिये।"

राजा का आदेश पाकर पंडितों ने अच्युतानंद की परीक्षा की और उसकी विद्वत्ता पर प्रसन्न होकर राजा से कहा—"यह पंडित हमारे राज्य-भर में पहला स्थान रखता है।" यह सुनकर राजा बहुत खुश हुआ और उसको कई तरह के पुरस्कार देकर अपने दरबारी पंडित बनाया।

अच्युतानंद ने उन पुरस्कारों को लाकर गंगाधर को दिखाया और कनकवल्ली के साथ विवाह किया। दरबारी पंडित होने के कारण उसे अच्छे घर और नौकरों की जरूरत पड़ी। धीरे-धीरे कई बच्चे भी पैदा हुए। उसके चारों तरफ कामनाएँ आँधियों की भाँति बढ़ती गयीं। लेकिन उसने कभी किसी प्रकार की चिन्ता न की। अच्छी नौकरी, सुंदर और विवेकशील पत्नी और बच्चे, बढ़िया भोजन, समाज में अच्छी प्रतिष्ठा—इन सबने मिलकर अच्युतानंद के जीवन को सुखमय बनाया।

नारी की निन्दा

पुराने ज़माने में एक राज्य में एक युवक राजा राज्य करता था। नारी-जाति के प्रति उसके मन में बड़ा आदर का भाव था। इसलिए उसके दरबार में अगर कोई किसी नारी की निंदा करता तो वह सहन नहीं कर पाता था।

एक दिन राजा अपने दल-बल के साथ जंगल में घूम रहा था। उस वक्त उसने एक युवक को लकड़ी काटते देखा। उसकी पत्नी सारी लकड़ियाँ इकट्ठी करके पति की मदद कर रही थी। उस युवक दंपति को देख राजा को बड़ी खुशी हुई। राजा अपने घोड़े पर से उतरकर एक पेड़ की छाया में बैठ गया और उस लकड़हारे और उसकी पत्नी को बुला लाने अपने नौकर को भेजा।

लकड़हारा पत्नी के साथ राजा को प्रणाम कर हाथ बाँधे खड़ा रह गया।

"देखो! तुम कैसे ज़िन्दगी काटते हो?" राजा ने पूछा।

"देखते तो हैं न महाराज! मैं और मेरी पत्नी लकड़ी काटकर उन्हें बेचकर दिन बिताते हैं।" लकड़हारे ने कहा।

"उन थोड़े पैसों से तुम्हारा गुज़ारा होता है?" राजा ने फिर पूछा।

"क्यों नहीं? महाराज! हमारा खर्च ही क्या है? कमाई से बच भी जाता है।" लकड़हारे ने कहा।

"जो बचता है उसे क्या करते हो?" राजा ने पूछा।

"जो बचता है, उसमें से थोड़ा पूँजी के रूप में रखता हूँ, थोड़ा कर्ज़दार को देता हूँ, थोड़ा फेंक देता हूँ और एक हिस्सा अपने दुश्मन को देता हूँ।" लकड़हारे ने जवाब दिया।

युवक की यह रहस्यपूर्ण बातें सुनकर राजा को बड़ी खुशी हुई। राजा को

नरेन्द्र कुमार जैन

पहले यह मालूम न था कि अनपढ़ लोग भी इतना अच्छा बोल सकते हैं। राजा के मन में कुतूहल पैदा हुआ कि उस युवक की बातों का गूढ़ अर्थ जान लेना चाहिए। इसलिए राजा उस युवक को दूर पेड़ों की आड़ में ले गया और पूछा—"अभी तुमने जो बातें कहीं, उनका गूढ़ अर्थ बतला दो।"

"महाराज! मैं दान आदि के मद्दे जो खर्च करता हूँ वह मेरी पूँजी है; क्यों कि वह अगले जन्म में काम देगी। कर्ज़दार जो हैं वे मेरे माता-पिता हैं। उन लोगों ने मुझे पाल-पोस कर बड़ा किया और लायकवर बनाया। मैं शराब पीने और मनोरंजन के पीछे जो धन खर्च करता हूँ वह फेंकने के समान है। इन सब के बाद जो बचता है उसे शत्रु को देता हूँ। मेरा शत्रु और कोई नहीं, मेरी पत्नी है।" लकड़हारे ने कहा।

पहली तीन बातें सुनकर राजा बहुत खुश हो गया था, चौथी बात के सुनते ही गुस्से में आकर बोला—"देखो, तुम अपनी पत्नी को शत्रु बताते हो! यह बड़ी भूल है! औरतों के साथ तुम्हें आदर का व्यवहार करना चाहिए। इसलिए आगे तुम कभी अपनी पत्नी को दुश्मन मत समझो।" राजा ने डाँट बतायी।

फिर राजा ने उस युवक से कहा—"तुम अपनी बातों के गूढ़ अर्थ और किसीसे न कहो! मैं यह जानना चाहता हूँ कि हमारे राज्य में इनका अर्थ बतलानेवाला कोई है कि नहीं? इसलिए तुम इस रहस्य को किसीसे बताओगे तो तुमको आजीवन कारावास की सज़ा दूँगा। यह बात अच्छी तरह याद रखो।"

लकड़हारे ने राजा की बात मान ली। राजा ने अपने नगर में पहुँचकर लकड़हारे की कही हुई बातों का ढिंढोरा पिटवा

दिया और ऐलान किया कि जो आदमी इनका अर्थ बताएगा उसे नारियल के बराबर का सोना दिया जाएगा ।

इन बातों का अर्थ बतलाकर इनाम पाने की कई लोगों ने कोशिश की; लेकिन एक भी सही अर्थ बता न सका । पर हर रोज सभी कोने में ढिंढोरा पिटवाया जा रहा था ।

एक दिन लकड़हारे की पत्नी ने ढिंढोरे की बातें सुनीं । उसने याद किया कि ये बातें उसके पति ने राजा से कही थीं और सोचने लगी कि अपने पति से उनके अर्थ जानकर राजा से बतला देने पर उसे नारियल के बराबर का सोना मिल जाएगा, ऐसा मौका उसे इस जिन्दगी-भर में न मिलेगा ।

उस दिन शाम को अपने पति के घर लौटते ही उसने पूछा—"तुमने उस दिन राजा से जो बातें कहीं, उनका क्या मतलब है ।"

"इन बातों के अर्थ से तुम्हारा क्या मतलब है ?" लकड़हारे ने अपनी पत्नी से पूछा ।

"उनका अर्थ बतला दूँ तो राजा नारियल के बराबर सोना देंगे । मैं उनका अर्थ बताकर नारियल के बराबर का सोना

"ले जाऊँगी।" लकड़हारे की पत्नी ने कहा।

"यह तो ठीक है, लेकिन उन बातों का अर्थ किसीसे बताऊँ तो मुझे जिन्दगी-भर राजा कारावास की सजा देंगे। यह बात याद रखो।" पति ने कहा।

लकड़हारे की पत्नी को लगा, उसे नारियल के बराबर सोना मिले तो उसके पति की हालत कुछ भी हो, कोई बात नहीं। यह सोचकर वह अपने पति पर रूठकर रोती रही।

पत्नी को रूठकर बैठ जाना लकड़हारे को अच्छा न लगा। उसके गुस्से को दूर करने की उसने कई तरह की कोशिश की।

"तुमने उन बातों का अर्थ नहीं बताया! चाहे मैं मर भी जाऊँ, तुम्हें क्या मतलब? मुझ पर तुम्हें रत्ती भर प्यार नहीं है।" लकड़हारे की पत्नी ने कहा।

"प्यार का मतलब, जिन्दगी भर कारागार में सड़कर मरना नहीं होता।" लकड़हारे ने कहा।

"राजा को कैसे मालूम होगा कि तुमने बताया है?" पत्नी ने पूछा।

"राजा ने तुमको मेरे साथ देखा है न?" पति ने कहा।

"वे थोड़े ही मुझे पहचानेंगे! राजा ने मेरी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा।" पत्नी ने कहा।

"अच्छा, मैं उन बातों का अर्थ बतला देता हूँ। पर, यह बात कहीं प्रकट न हो, यह जिम्मेवारी तुम्हारी है।" यह कहकर लकड़हारे ने उन बातों का अर्थ बताया। उसकी पत्नी का चेहरा खुशी से खिलते देख वह आनंद से भर उठा। दूसरे दिन लकड़हारे की पत्नी राजा के पास गयी, उन बातों का अर्थ समझाकर नारियल के बराबर का सोना इनाम में पाया।

राजा ने उसकी ओर ध्यान से देखकर पूछा—"तुमको कहीं देखा-सा मालूम होता है।"

"हाँ, महाराज! मैं और मेरे पति एक बार जंगल में लकड़ी काट रहे थे, तब आप उधर आये और मेरे पति से बात भी की।" लकड़हारे की पत्नी ने कहा।

राजा ने चकित होकर पूछा—"तुम उस लकड़हारे की पत्नी तो नहीं? उसी ने तुमको इन बातों का अर्थ बताया है न?"

"हाँ, महाराज!" उस औरत ने कहा।

राजा को बड़ा क्रोध आया, फिर भी लकड़हारे की पत्नी को पुरस्कार देकर भेज दिया; क्यों कि इनाम पाने का कोई नियम न था।

उस औरत के जाते ही राजा ने लकड़हारे को बुला भेजा और कहा—"तुमने राजा की आज्ञा का उल्लंघन करके अपनी बातों का अर्थ अपनी पत्नी से क्यों बताया? तुमको आजीवन कारावास की सज़ा देता हूँ।"

"दीजिये, महाराज! मेरी पत्नी ने तब तक सताया जब तक मैंने नहीं बताया। उससे तंग आकर ही मैंने बताया, महाराज! मैंने उसे यह भी समझाया कि मुझे जिन्दगी-भर कारागार की सज़ा मिलेगी, फिर भी उसने इसकी परवाह न की और उसका अर्थ बताकर आप से इनाम लिया। उस दिन मैंने अपनी को पत्नी शत्रु बतलाया तो आपने मुझे डाँटा। अब आप मेरी बात की सच्चाई समझ गये होंगे।" लकड़हारे ने कहा।

एक दम राजा की आँखें खुल गयीं। लकड़हारे की अक़लमंदी और होशियारी पर खुश होकर राजा ने उसे उसकी पत्नी से भी ज़्यादा इनाम देकर भेज दिया।

इसके बाद कभी कोई नारी की निंदा करता तो राजा नाराज़ न होता था।

अमर फल

प्राचीन काल में एक मुनि संसार से विरक्त हो जंगल में जाकर तपस्या कर रहा था. एक दिन देवता ने प्रसन्न होकर मुनि के हाथ में एक फल दिया और कहा—"मैं तुम्हारी तपस्या पर प्रसन्न हूँ। इस अमर फल को तुम अपने हाथ में लेकर जो भी चाहोगे, वह तुमको तुरंत मिल जायगा।" यह कहकर वह अंतर्धान हो गया।

वैसे मुनि की कोई इच्छा न थी। उसने सोचा कि देवता ने उसकी परीक्षा लेने शायद यह फल दिया है। फल के द्वारा जनता का उपकार करने के ख्याल से राजा के पास गया। राजा ने मुनि के आगमन पर खुश होकर उचित आदर-सत्कार किया और आने का कारण पूछा।

"राजन, यह एक अमर फल है। इसका मूल्य देकर जो खरीदेगा, उसकी एक इच्छा की पूर्ति होगी। इसके बाद इसे दूसरों को कम दाम पर बेचना होगा। इच्छा के पूरा होने के बाद किसी को भी इस फल को एक सप्ताह से अधिक अपने पास रखना नहीं चाहिये। रखना बहुत खतरनाक है. पहले मैं यह फल आपको देता हूँ। कहिये, इसका क्या मूल्य देनेवाले हैं?" मुनि ने कहा।

राजा के मन में शीघ्र एक इच्छा की पूर्ति करने की कामना थी। उसका पड़ोसी राजा के साथ बहुत समय से युद्ध चल रहा था। काफ़ी धन खर्च होता था। इसलिए इस अमर फल द्वारा पड़ोसी राजा पर विजय पाने की इच्छा से उसे एक लाख मुद्राएँ देकर खरीदने का निश्चय किया।

मुनि ने उस फल को राजा के हाथ में देते हुए कहा—"तुम्हारी इच्छा की पूर्ति होने के एक सप्ताह के अंदर कम मूल्य पर

इसे दूसरों में बेचना है। जो आप से खरीदेगा, उससे भी यह बात कहनी है।" यह कहकर एक लाख मुद्राएँ ले मुनि ने गरीबों में बांट दिया और अपने रास्ते चला गया। जंगल में पहले की तरह फिर तपस्या करने लगा।

अमर फल के द्वारा जल्द ही राजा की इच्छा की पूर्ति हुई। फिर जब युद्ध शुरू हुआ, पड़ोसी राजा बुरी तरह से हार गया। वह राज्य भी इसी राजा के अधीन में आ गया।

विजय के मिलते ही राजा ने भरी सभा में उस अमर फल को सबको दिखाकर उसकी महिमा बतायी और कहा, जो खरीदना चाहता है, उसको मैं बेच सकता हूँ। दीर्घकाल से एक बीमारी से दुखी रोगी ने उसे ९० हजार मुद्राएँ देकर खरीदा और अपने रोग का निवारण किया।

दुबारा अमर फल दूसरे के हाथ में चला गया। उसके प्रभाव से कई लोगों की, कई तरह की इच्छाएँ पूरी हुईं। कुछ लोग अच्छे व्यापारी बने, कुछ विद्यावान बने, कई बीमारियों से मुक्त हुए, इच्छाओं की पूर्ति के साथ अमर फल का प्रभाव भी घटता गया।

बहुत समय बीत गया। पुष्पार्क नामक व्यक्ति को लकवा मार गया। एक बार उसने अमर फल को खरीदकर अपनी पत्नी को मौत के मुँह से बचाया था। उस अमर फल के मूल्य का पता लगाया तो मालूम हुआ कि दो पैसे हैं। उसने सोचा कि दो पैसे देकर खरीदने से बीमारी के ठीक होने पर उसे दूसरे को एक ही पैसे में बेचना होगा। इसके बाद वह आदमी किसी और को न बेच सकेगा और खतरे में पड़ जाएगा। यह सोचकर पुष्पार्क ने अमर फल न खरीदकर वैद्य पर भरोसा रखना चाहा।

लेकिन उसकी पत्नी मालिनी ने अपने पति से छिपाकर दो पैसे देकर, नौकर के ज़रिये अमरफल मंगवाया और यह इच्छा की कि उसके पति की बीमारी दूर हो जाय। पुष्पार्क की बीमारी अचानक दूर हो गयी। उसने सोचा कि दवाओं के प्रभाव से बीमारी ठीक हो गयी।

अब मालिनी को अमर फल एक पैसे में बेचना था, लेकिन किसको बेचे! जो खरीदेगा, उसका क्या हाल होगा! इसलिए बिना बेचे जो भी खतरा आवे, सामना करने का उसने निश्चय किया। वह खतरा किस रूप में आएगा, इस भय से मालिनी बीमार जैसी होने लगी।

नौकर ने एक दिन मालिनी से पूछा—"माईजी, क्या तबीयत ठीक नहीं है?"

"अब मैं ज्यादा दिन नहीं जी सकती रे!" यह कह आँसू बहाते मालिनी ने अमर फल की सारी कथा सुनायी।

"माई जी, क्यों?" नौकर ने पूछा।

"इस फल को मैं किस के हाथ बेचूँ? कोई भी खरीदेगा, वह इसी तरह खतरे में फँस जाएगा। देखते-देखते दूसरे को कैसे मरवा डालूँ? मैं ही मर जाऊँगी।" मालिनी ने कहा।

नौकर ने हँसकर जवाब दिया—"किसी को मरने की ज़रूरत नहीं। एक पैसे में उस फल को मुझे बेच दीजिए!"

"अरे, पगले! तुम्हारी इच्छा के पूरे हो जाने के बाद इसे किसके हाथ बेचोगे?" मालिनी ने पूछा।

"मैं अगर कोई इच्छा करूँ, तब तो! उसे मैं पेटी में छिपा रखूँगा।" यह कहते नौकर ने एक पैसा निकालकर मालिनी के हाथ दिया और अमर फल को ले जाकर अपने घर में लकड़ी के बक्स के नीचे छिपा दिया। उसके बाद वह क्या हुआ, कुछ पता नहीं!

उषा की दृष्टि अनिरुद्ध की तस्वीर पर केंद्रित हो गयी। इससे उसका शरीर पुलकित हो उठा। यह देख चित्ररेखा मुस्कुरा उठी और बोली–"मुझे मालूम हो गया कि स्वप्न में कौन तुमको दिखाई दिया। चाहे वह कहीं किसी भी हालत में क्यों न हो! मैं उसको ले आकर तुमको सौंप दूँगी। मैंने जो वचन दिया, उसका पालन करूँगी। उसके बाद तुम्हारी मर्जी।"

उषा चित्ररेखा से बोली–"तुम्हारी कुशलता की बात क्या कहूँ! तुमने जो चित्र खींचा उसे देखते रहने से लगता है कि सपने में देखने पर मेरे मन में जो भाव उत्पन्न हुए, वे फिर अब ताजा हो रहे हैं। इसका वंश कौन-सा है? नाम क्या है? कैसा व्यक्ति है? क्या किया करता है? कहाँ रहता है? अविवाहित है या शादी-शुदा है? सविस्तार बतला दो!"

इस पर चित्ररेखा ने जवाब दिया–"द्वारका नगर के शासक कृष्ण के बारे में तुमने सुना होगा। कहा जाता है, शिवजी के तीसरे नेत्र की ज्वाला से भस्म हुए मन्मथ ने प्रद्युम्न के नाम से कृष्ण के पुत्र के रूप में जन्म लिया है। यह उसी प्रद्युम्न का पुत्र है, नाम अनिरुद्ध है। इसकी वीरता सारे संसार में प्रसिद्ध है। ऐसे व्यक्ति को पति के रूप में पा सकोगी तो तुम्हारे भाग्य की प्रशंसा करना आदिशेष के लिए भी संभव न होगा। हमारे इस

२८. उषा और अनिरुद्ध का विवाह

शोणपुर की भांति द्वारका नगर भी अभेद्य है। फिर भी तुमको खुश करने के लिए मैं कोई न कोई उपाय कर के वहाँ जाऊँगी और कार्य को सफल बनाऊँगी।"

"तुम सब प्रकार के उपाय जानती हो। योग विद्या जानती हो। वांछित रूप और इच्छागति रखती हो; हर तरह का काम सफल बना सकती हो। अनिरुद्ध को न देखूँगी तो मेरा जीना मुश्किल है; मेरे प्राणों की रक्षा करो। बहुत दिनों से मैं सहन कर रही हूँ। अब एक घड़ी भी अपने प्राणों को रोक न सकूँगी। तुम अपनी सखी को मिलाना चाहती हो तो जल्दी जाओ।" उषा ने कहा।

चित्ररेखा ने उषा के गले लगा कर फिर कहा—"तुम जाओ और सखियों के साथ अपना समय बिताओ।"

इसके बाद वह आकाश में उड़कर अंतर्धान हो गयी। वह मनोवेग से एक क्षण में द्वारका पहुँची। वहाँ पर वह सोच रही थी कि अब क्या करना चाहिये, इतने में एक सरोवर के पास नारद दिखाई दिया। चित्ररेखा ने उसके निकट पहुँचकर, नमस्कार किया।

नारद ने चित्ररेखा को आशीर्वाद देकर हँसते हुए पूछा—"इधर क्यों भटक गयी हो?"

चित्ररेखा ने नारद को उषा का सारा समाचार सुनाया और कहा—"उषा ने स्वप्न में अनिरुद्ध को देखा है। मैंने उसको वचन दिया कि अनिरुद्ध को जरूर उसके पास ले जाऊँगी। मैं अनिरुद्ध को ले जाऊँगी तो बाणासुर उस पर नाराज हो, उसका अहित करना चाहेगा। इसीलिए आप यह बात कृष्ण से कहिये। यह निश्चित है कि बाणासुर और कृष्ण के बीच युद्ध होगा तो कृष्ण की जीत होगी। इस बात का मुझे जरा भी डर नहीं है।

मेरा डर तो इस बात का है कि कृष्ण को यह मालूम होने पर कि मैं अनिरुद्ध को साथ ले गयी हूँ, तो शायद नाराज होकर मुझे शाप दे। आप कृपा करके ऐसा उपाय कीजिये कि कृष्ण से मेरी कोई हानि न हो। तो उषा की इच्छा की पूर्ति होगी। मैं अपने 'वचन' का पालन भी कर सकूँगी।"

नारद ने चित्ररेखा को 'तामसी' नामक विद्या का उपदेश दिया—"इस विद्या के द्वारा तुम्हारा कार्य सफल होगा। तुम्हारे अनिरुद्ध को ले जाने के कारण से बाणासुर के साथ जो युद्ध होगा, उस युद्ध को मैं वहाँ पहुँचकर रोक दूँगा।"

यह कहकर नारद अपने रास्ते चला गया।

चित्ररेखा अदृश्य रूप में कृष्ण और प्रद्युम्न के महलों को पारकर अनिरुद्ध के अन्तःपुर में पहुँची। वहाँ पर सोने के गिलासों से मधु का पान करते, कई नारियों के बीच बैठे अनिरुद्ध को देखा। उसके मनोरंजन के लिए कई सुंदर नारियाँ नाच-गान करती थीं। लेकिन चित्ररेखा ने अनिरुद्ध के वदन को ध्यान से देखा। वह उसे अन्यमनस्क-सा लगा। वह कभी हँस पड़ता तो लगता था कि प्रयत्न पूर्वक हँस रहा है। बोलता तो उसका कंठ गद्गद्
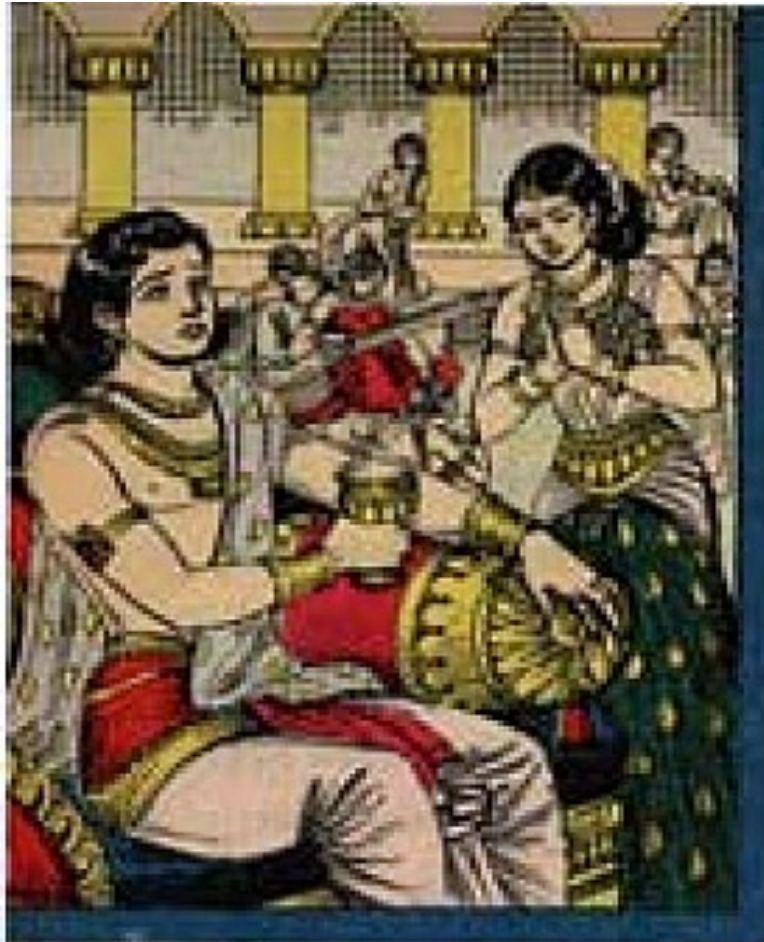
मालूम होता। उसकी हर चेष्टा में उत्साह न था।

"इसने भी उषा की तरह कोई स्वप्न तो नहीं देखा। इसके मन को लुभानेवाला सौंदर्य उषा में न हो तो और किसमें होगा? पार्वती के अनुग्रह से सब-कुछ संभव है।" चित्ररेखा मन ही मन सोचने लगी।

चित्ररेखा ने अनिरुद्ध से बात करनी चाही। नारद के जरिये उसे जो तामसी विद्या प्राप्त थी, उसके प्रयोग से उसने सबको बेहोश कर दिया, अनिरुद्ध के निकट जाकर प्रत्यक्ष हुई और हाथ जोड़कर यों बोली—"महाराज बलि का पुत्र बाणासुर है। पार्वती देवी के अनुग्रह से उसे एक पुत्री हुई। उसका नाम उषा है। वह तीनों लोकों में अनुपम सुंदरी है। उसके सौंदर्य का वर्णन ब्रह्मा भी नहीं कर सकते। मैं कैसे समझा सकती हूं? उषा ने एक दिन रात में आपको स्वप्न में देखा, तब से आपके विरह की पीड़ा से बहुत परेशान है। मैं उसकी सखी हूं। मेरा नाम चित्ररेखा है। अगर आप पसंद करें तो मैं अपने साथ आपको ले जाने आयी हूं। इसमें जरा भी संदेह नहीं कि आप दोनों एक दूसरे के वास्ते पैदा हुए हैं। यह सब ईश्वर की कृपा है। पार्वती देवी ने पहले ही कहा था कि आप दोनों का विवाह होगा। अगर मैं आपका चित्र तैयार करके उषा के मन में आशा न जगाती तो न मालूम, उसकी क्या हालत होती? आपकी बात अलग है, क्योंकि आपकी अनेक पत्नियां हैं! पर आपके ही वास्ते तड़पनेवाली मेरी उषा की रक्षा कीजिये। मैं हाथ जोड़कर आपसे प्रार्थना करती हूं।"

चित्ररेखा की बातें सुनकर अनिरुद्ध बोला—"मैं क्या बताऊं? तुम्हारी सखी ने जो स्वप्न देखा, वही स्वप्न मैंने भी देखा। उस दिन से मुझे दिन और रात का फ़र्क
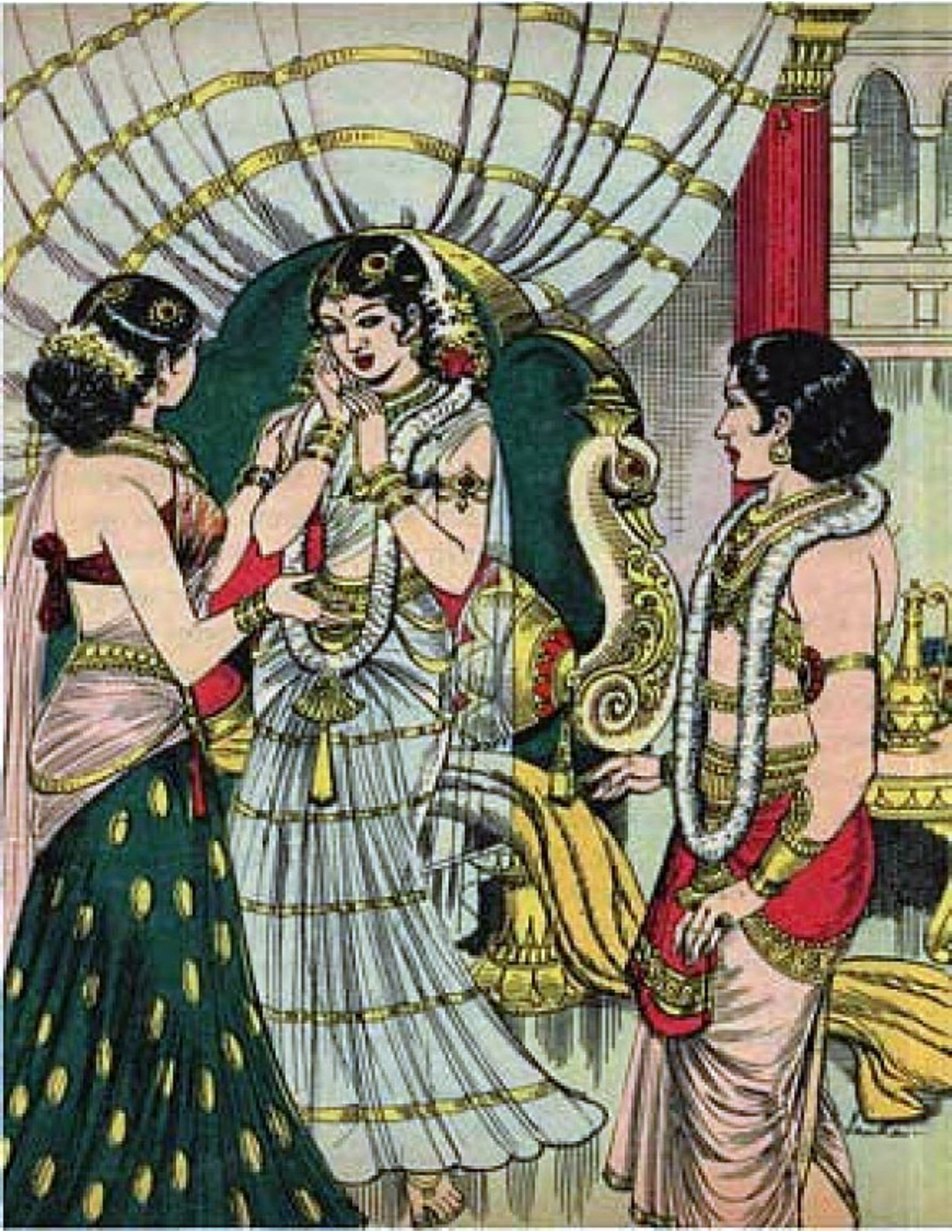
मालूम न होता। मुझे नींद नहीं आती। तुम मेरे भाग्य की देवी बनकर आयी हो। नहीं तो मैं समझ न पाता था कि मुझे क्या करना है। तुमको मुझसे प्रार्थना करने की ज़रूरत नहीं। मुझे खुशी से उषा के पास ले जाओ। मैं तुम्हारे साथ आऊँगा।"

इस बात पर चित्ररेखा को बड़ी खुशी हुई। वह अनिरुद्ध का हाथ पकड़कर आकाश में उड़ी और अपनी विद्या के बल से अनिरुद्ध को भी अदृश्य बनाया। दूसरे क्षण वे दोनों उषा के अंतःपुर में थे।

उषा और अनिरुद्ध ने एक दूसरे को प्रत्यक्ष देख लिया।

"लो, यह तुम्हारा प्रियतम है। मैंने अपने वचन का पालन किया है। इसके साथ पाणिग्रहण करो। गांधर्व-विवाह राजाओं के लिए उचित ही है। इस विवाह के लिए पार्वती के आशीर्वाद भी प्राप्त है।" यह कहकर चित्ररेखा ने उषा का आलिंगन किया। उन दोनों को नये वस्त्र, पुष्पमालाएँ और आभूषण भी ला दिये। अनिरुद्ध ने उषा का हाथ अपने हाथ में लेकर पाणिग्रहण किया। कुछ दिन उषा और अनिरुद्ध ने दांपत्य जीवन का सुख भोगा। यह रहस्य अंतःपुर के पहरेदारों को मालूम हुआ। पहरेदारों ने जाकर बाणासुर से कहा। यह जानकर बाणासुर को बड़ा क्रोध आया कि कोई मानव उसकी ख्याति और पराक्रम की परवाह किये बिना उसीके घर में प्रवेश करके उसकी पुत्री पर कलंक लगा रहा है।

"तुम लोग जल्दी जाकर उस दुष्ट को घेर कर पकड़ लो। वह भागने न पावे। मेरा अपमान करके देवता भी अपने प्राणों से बच नहीं सकते।" इस तरह बाणासुर ने भटों को खबरदार किया। उसी क्षण कई हज़ार राक्षस तलवार और भाले लेकर उषा के अंतःपुर पर टूट पड़े।

यह कोलाहल सुनकर अनिरुद्ध ने महल के ऊपरी भाग से देखा। उस महल को चारों तरफ से घेरकर चिल्लानेवाले राक्षसों को देख उनसे लड़ने के लिए तुरंत वह सिंह की भांति आगे बढ़ा।

इस बीच में उषा रोती, कलपती, हाथ मलती, आक्रोश करने लगी—'मैंने ऐसा काम किया, जो कन्याओं के लिए उचित नहीं। मैं कुलटा हो गयी हूँ; अपने वंश पर कलंक लगा रही हूँ; तीनों लोकों के शासक अपने पिता की वैरी हो गयी हूँ। हीरे जैसे राजकुमार को मैंने आफ़त में फँसा दिया। लगता है, जगत की माता पार्वती का वरदान बेकार होनेवाला है। अब मैं क्या कर सकती हूँ? मेरे मान्य देवताओ! क्या मुझे इस आफ़त से बचा नहीं सकते?'

उषा को दुखी देख मुस्कुराते हुए अनिरुद्ध बोला—"पगली! तुम मेरे प्रताप को नहीं जानती? तुम अपने पिता के बल की बात न कहो। स्वयं शिवजी भी प्रमथ-गणों के साथ आवें तो भी मैं जीत सकता हूँ। मैं अपने दुश्मनों को अपनी मुट्ठियों से घूँसे देकर उनके शरीर से खून बहा दूँगा। इस नगर का नामकरण शोणपुर सार्थक

बनाऊँगा। यहीं खिड़की के पास खड़े होकर देखती रहो।"

यह कहते अनिरुद्ध अंतःपुर के द्वार पर पड़े एक गदा लेकर राक्षसों पर झपट पड़ा। उस वक्त नारद वहीं आ पहुँचा और आकाश में खड़े होकर यह विनोद देखने लगा।

राक्षसों ने अनिरुद्ध पर बाण, गदा और सभी आयुधों का प्रयोग किया। फिर भी उसने उनकी परवाह नहीं की। गदा लेकर राक्षसों को अंधाधुंध पीटने लगा। कुछ लोगों को घूँसे मारकर मार डाला; कुछ लोग घायल हो गये। बाकी लोग भागकर

बाणासुर के सामने खड़े हुए। बाणासुर उन सब को गालियाँ देते हुए बोला—"दुश्मन के हाथ मार खाकर भाग आये हो! तुम्हें जान इतनी प्यारी है! तुम्हारे पराक्रम क्या हो गये? तुम लोगों पर निर्भर रहकर ही मैंने सभी लोक जीते। तुम लोगों ने आज मेरा अपमान कर डाला। जाओ, तुम्हारे पीछे रथ, गज, तुरग और पदादि को भेज रहा हूँ। दुश्मन का खात्मा कर डालो।" यह कहते बाणासुर कालकेय नामक राक्षसों को अनिरुद्ध से लड़ने भेजा। वे ज़मीन और आसमान में फैलकर युद्ध करने लगे।

राक्षसों को अपने ऊपर युद्ध करने आते देख, अनिरुद्ध एक तलवार और ढाल लेकर राक्षसों पर झपट पड़ा। दुश्मन को तितर-बितर करते वह अपनी वीरता दिखाने लगा। अनिरुद्ध अकेला होकर भी हज़ारों राक्षसों के साथ बिजली की तरह युद्ध करते देख नारद को अपूर्व संतोष होने लगा। उसने अनेक बड़े-बड़े वीरों को लड़ते देखा था। अनिरुद्ध की तरह दुश्मन को चकित करते युद्ध करनेवाला उन में एक भी न था।

बाणासुर के राक्षसों में कुछ लोग मरे, कुछ लोग आपस में एक दूसरे को कुचलकर घायल हो गये, कुछ लोग भाग खड़े हुए। अनिरुद्ध सिंह की तरह ललकारते हुए उनका पीछा करने लगा।

अनिरुद्ध के द्वारा मार खाये हुए अपने वीरों को देख बाणासुर को शंका होने लगी। उसके हाथ में मार खाये हुए इंद्र आदि आज भी उसका नाम सुनते ही काँप उठते हैं। ऐसी हालत में एक ब्रह्मचारी ने अपनी फ़ौज का सामना कर पराजित किया है। यह देख बाणासुर खुद अनिरुद्ध के साथ युद्ध करने निकला।

अरण्य पुराण

[२८]
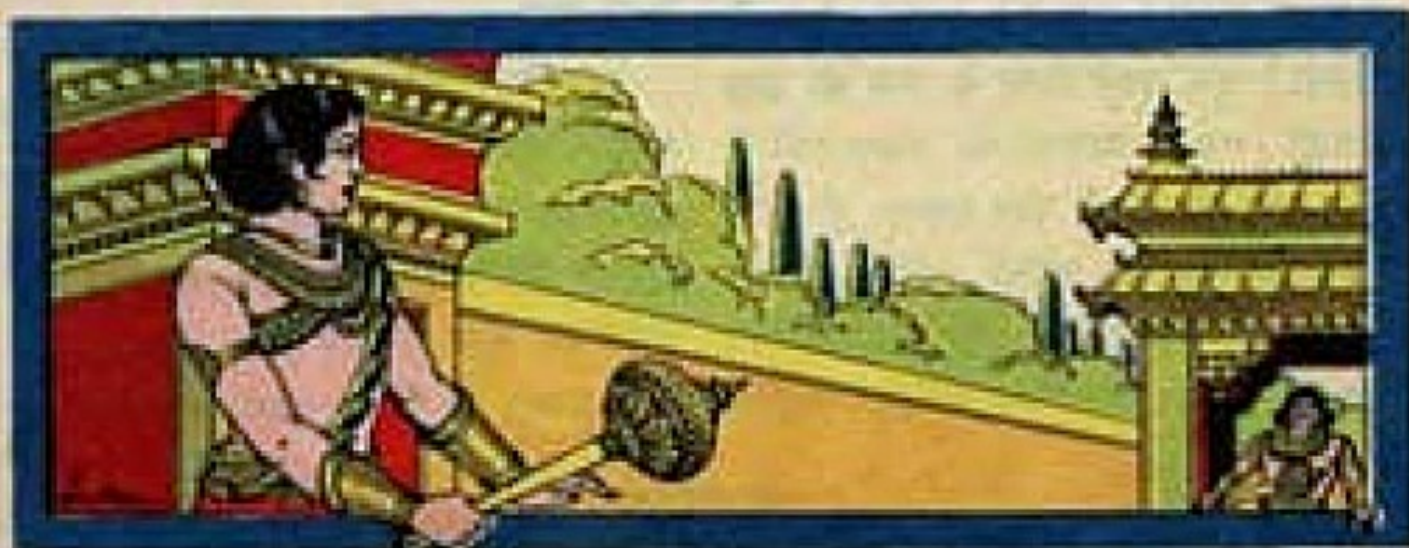
काआ का शरीर मोटा होता और उसका फुफकारना मौगली को मालूम होने लगा।

"मैंने भूत काल की सभी ऋतुओं को याद की है! नदी के किनारे चलो। मैं बताऊँगा कि कुत्तों की भीड़ के बारे में क्या करना है।" काआ ने कहा।

वह तीर की भांति सीधे वैन गंगा की बड़ी शाखा की ओर निकला। मौगली उसके पीछे पीछे हो लिया। जल के नीचे "शांति-चिह्न" वाले गढ्ढे में जब वह पहुँचा तब मौगली भी तैरने लगा।

"तैरो नहीं, भैया! मैं जल्दी चलता हूँ। मेरी पीठ पकड़ो।" काआ ने कहा। मौगली ने अपने बायें हाथ को काआ के गले के चारों ओर डालकर, दायें हाथ को अपने शरीर से लगा रखकर, पैर सीधे कर लिये। तब काआ प्रवाह के विपरीत तैरता जाने लगा।

पश्चिम दिशा में एक-दो मील की दूरी पर वैन गंगा संगमरमर के पत्थरों के टीलों के बीच की संकरीली घाटी में तेजी से बह रही है! उस घाटी से होते हुए जाते समय मौगली ने इधर-उधर नज़र दौड़ाई। उसे गढ्ढे और मीठे की गंध आयी। वह हर बार अपने सर को पानी में डुबोता, फिर सांस लेने सर ऊपर उठाता।

जल के नीचे के एक पत्थर से काआ पूंछ लपेटकर रुक गया।

"यह तो मौत का सुरंग है। यहाँ क्यों आये?" मौगली ने पूछा। "ठीक से देखो। सब सो रहे हैं। पहले भी यह जगह ऐसी ही थी। कोई परिवर्तन नहीं।" काआ बोला।

जब से जंगल बना, तब से इस घाटी के टीलों में पहाड़ी मधुमक्खियों का निवास हो चला है। इसलिए इस प्रदेश के आधे मील की दूर तक कोई प्राणी नहीं जाता। यह बात मौगली भी जानता है। घाटी के हर सुरंग में मधुमक्खियों के छत्ते हैं। इसलिए घाटी के दोनों तरफ काले मखमल के पर्दों की भांति छत्ते लटक रहे हैं। कहीं मधुमक्खियां सो रही हैं। उनको देखकर ही मौगली ने अपने सर को पानी में डुबाया।

काला प्रवाह की विपरीत दिशा में तैरते घाटी के उस छोर पर पहुँचकर बोला—"इस ऋतु में शिकार की भूमि देखो।"

नदी के तट पर तीन कंकाल दिखाई दिये। दो हिरणों के और एक जंगली भैंसा का था। किसी चीते या भेड़िये ने उनका स्पर्श तक नहीं किया है।

मौगली को मालूम हुआ कि वे तीनों जानवर भूले-भटके उधर आये और मधुमक्खियों के शिकार हुये होंगे।

"उनके नींद से जागने के पहले हम चले जायेंगे।" मौगली बोला।

"वे सबेरे तक न उठेंगे। मेरी बात सुनो, बहुत सालों के पहले एक हिरन कुत्तों के भगाने से दक्षिण से उधर आ निकला। वह जंगल से अपरिचित था। वह डर के मारे अंधा हो इस घाटी में कूद पड़ा। कुत्ते भी उस पर झपटे। कड़ी धूप के कारण मधुमक्खियां क्रोध में थीं। कुत्ते पानी तक पहुँचने के पहले ही मर गये। जो कुत्ते ऊपर रहे, वे भी मर गये। लेकिन हिरन बच गया।" काला बोला।

"यह कैसे?" मौगली ने पूछा।

जान के डर से हिरन पहले कूद पड़ा। उस के कूदने के बाद ही मधुमक्खियों में चेतना आयी। उसके बाद जो कुत्ते कूद पड़े, उनकी भी यही हालत हुई।" काला बोला।

"तो हिरन मरा ही नहीं?" मौगली ने सोचते हुये कहा।

"मधुमक्खियों की वजह से मरा नहीं, लेकिन जब वह धारा में बहा जा रहा था, तब उसे पकड़ने के लिए कोई न रहा– जैसे कोई मौगली कूद पड़ता है तो काया जैसे स्थूल काय उसे पकड़ता है।" काया बोला।

"मौत से खिलवाड़! लेकिन काया, इस अरण्य में मुझसे बढ़कर कोई ज्ञानी नहीं है।" मौगली बोला।

"मान लो, कुत्तों की भीड़ ने तुम्हारा पीछा किया, तो जो कुत्ते मरे नहीं, वे यहीं या नहीं तो और नीचे के जल में गिर जायेंगे। बैन गँगा की धारा बड़ी खतरनाक है। बेचारे उनको पकड़ने के लिए काया न रहेगा! वे सियोनी गुफाओं के पास ही तिरेंगे! वहाँ पर उनका गला घोंटने के लिए भीड़ तैयार रहेगी!" काया बोला।

"अद्भुत है! आश्चर्य है! रात के वक्त भले ही सूरज उगे, मगर इससे बढ़िया इंतजाम दूसरा न होगा! और यहीं, दौड़ने और कूदने की बात! अब ऐसा करना है कि मुझे देख कुत्ते मेरा पीछा करें।" मौगली बोला।

"ऊपर जो पत्थरों के टीले हैं; उनको उस पार से तुम ने देखा?" काया ने पूछा।

"नहीं, नहीं, यह बात मैं भूल ही गया।" मौगली बोला।

"जाकर देखो, बड़ा भयानक प्रदेश है। सब कहीं चट्टान और गड्ढे हैं, भूल से पैर फिसल गया तो शिकार वहीं खतम होगा! तुमको यहीं छोड़ कर, कुत्तों के दल को ढूँढने के लिए भीड़ से बता देता हूँ। उनके साथ के काम से मेरा कोई सरोकार न होगा! मेरी जाति अलग है, भेड़ियों की जाति और है।" यह कहते काया धारा में तैरते जाने लगा।

एक जगह पर उसे फाओ और 'अकेला' दोनों दिखाई पड़े।

"हत्! कुत्ते! कुत्तों का दल धारा में आ रहा है!

तुम में हिम्मत है, तो छिछले पानी में उनको मार सकते हो।" काआ ने कहा।

"वे कब आयेंगे! मानव का बच्चा कहाँ?" अकेला ने पूछा।

"वे अपनी इच्छा से आयेंगे! अब रही, मानव के बच्चे की बात! उससे बचन लेकर उसे मौत का शिकार को बनाया तुम लोगों ने, वह मेरे साथ ही है। अगर अब तक वह मारा न गया तो वह तुम्हारी गलती नहीं। अरे बूढ़े कुत्ते! मौत के वास्ते यहीं इंतजार करते रहो! मैं और तुम्हारा मानव का बच्चा, हम दोनों तुम लोगों के साथ हैं! अपनी हिम्मत की सराहना करो।" यह कहते काआ धारा के विपरीत तैरकर घाटी के बीच खड़े हो कर आगे के पहाड़ी छोरों की जाँच करने लगा।

जल्दी ही नक्षत्रों को छिपाते मौगली का कर हिलने लगा। इस के बाद एक आदमी के पानी में कूदने की आवाज़ हुई। दूसरे क्षण मौगली काआ की गेंडुरी के बीच पहुँच गया।

"यह कोई बड़ा कुदान नहीं, मैं शौक के वास्ते दुगुना कुदान कर बैठा हूँ। पर ऊपरवाली जगह बड़ी खराब है। छोटी-छोटी झाड़ियाँ, गहरे गढ़े, एक जगह में मैं तीन पत्थर एक के ऊपर एक रख दिये। दौड़ते वक्त मैं उनको लातों से लुढ़का दूँगा। मधु-मक्खियों को बड़ा क्रोध आयगा! काआ, मेरे लौटने तक तुम यहीं रहो, सुबह ही भीड़ को भड़का देता हूँ।" यह कहते मौगली घाटी के छोर के किनारे तक तैरते चला गया।